विज्ञान, मानव और ब्रह्मांड

डॉ० जयंत विष्णु नार्लीकर
टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेन्टल रिसर्च, बंबई

राजपाल एण्ड सन्ज़

प्रस्तुत पुस्तक भारत सरकार की 'प्रकाशकों के सहयोग से हिंदी में लोक-प्रिय पुस्तकों के प्रकाशन की योजना' के अन्तर्गत प्रकाशित की गई है। इसके प्रथम संस्करण की 3000 प्रतियों में से भारत सरकार ने 1000 प्रतियां खरीदी हैं। इसके लेखक डॉ० जयंत विष्णु नार्लीकर हैं।

रविशंकर शुक्ल व्याख्यान-माला के अन्तर्गत
मार्च 1983 में दिए गए व्याख्यानों पर आधारित

प्रस्तावना

हिंदी में ज्ञान-विज्ञान का विविध साहित्य उपलब्ध कराने के लिए केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय-पुस्तक प्रकाशन की अनेक योजनाओं पर कार्य कर रहा है। इनमें से एक योजना प्रकाशकों के सहयोग से हिंदी में लोकप्रिय पुस्तकों के प्रकाशन की है। सन् 1961 से कार्यान्वित की जा रही इस योजना का मुख्य उद्देश्य जनसाधारण में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का प्रचार-प्रसार करना और साथ ही हिंदीतर भाषाओं के भी साहित्य की लोकप्रिय पुस्तकों को हिंदी में सुलभ कराना है ताकि ज्ञान-विज्ञान की जानकारी पाठकों को सुबोध शैली में मिल सके। इसके अंतर्गत प्रकाशित होने वाली पुस्तकों को अधिक से अधिक पाठकों तक पहुंचाने के विचार से इनका मूल्य कम रखा जाता है। इस योजना के अधीन प्रकाशित पुस्तकों में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार, द्वारा निर्मित शब्दावली का प्रयोग किया जाता है ताकि हिंदी के विकास में ऐसी पुस्तकें उपयोगी सिद्ध हों। इन पुस्तकों में विचार लेखक के अपने होते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक 'विज्ञान, मानव और ब्रह्मांड' के लेखक डॉ॰ जयंत विष्णु नार्लीकर हैं। इस पुस्तक में ब्रह्मांड में वर्तमान ग्रहों तथा अन्य पिंडों का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इस पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें दिए गए वैज्ञानिक प्रेक्षण भारतीय ऋषियों तथा मुनियों की ब्रह्मांड-संबंधी अवधारणाओं के अनुरूप हैं। खगोलिकी के वृहत् फलक पर लेखक ने इस विषय को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। इसकी भाषा सरल और सुबोध है।

आशा है, इस पुस्तक से सामान्य पाठक लाभान्वित होंगे।

22, जनवरी 1985
केंद्रीय हिंदी निदेशालय
(शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय)
रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली—110066

(राजमणि तिवारी)
निदेशक

दो शब्द

रविशंकर विश्वविद्यालय के द्वारा प्रतिवर्ष पं. रविशंकर शुक्ल स्मृति व्याख्यानमाला आयोजित की जाती है। इस भाषणमाला के लिए विश्वविद्यालय देश के प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों, साहित्यकारों और समाज-शास्त्रियों को आमन्त्रित करता रहा है। हमारे लिए यह हर्ष का विषय है कि विश्वविद्यालय के अनुरोध पर अंतर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त पद्म-भूषण प्रो० जयन्त विष्णु नार्लीकर ने इस भाषणमाला के अन्तर्गत मार्च 1983 में "ब्रह्मांड, विज्ञान और मानव" विषय पर तीन भाषण दिए। इन भाषणों को पुस्तक के रूप में पाठकों के सामने प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है।

इस व्याख्यानमाला की एक शर्त यह है कि इसके अन्तर्गत दिए गए भाषण हिन्दी में ही हो। रविशंकर विश्वविद्यालय इस प्रकार के वैज्ञानिक और तकनीकी विषय पर व्याख्यानमाला के आयोजन और प्रकाशन द्वारा हिन्दी की विनम्र सेवा कर रहा है। पुस्तक में डा० नार्लीकर ने एक जटिल और तकनीकी विषय पर अपने मौलिक विचारों को इस सुन्दरता के साथ प्रस्तुत किया है कि आम पाठक इसे सरलता से समझ सकता है।

विश्वविद्यालय का आमंत्रण स्वीकार करने के लिए हम डा० नार्लीकर के अत्यंत आभारी हैं और साथ ही आभारी हैं हम रायपुर की प्रबुद्ध जनता के जिसने इस व्याख्यानमाला में अभूतपूर्व रुचि ली।

रायपुर, म० प्र०

भगवतकुमार श्रीवास्तव
कुलपति
रविशंकर विश्वविद्यालय

50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

कृतज्ञता-ज्ञापन

वैज्ञानिक विषयों पर हिन्दी में व्याख्यान देने का अभ्यास मुझे नहीं है। फिर भी इस विश्वास से कि हिन्दी भाषा के सर्वांगीण विकास के लिए उसमें विज्ञान व्यक्त करने की क्षमता होनी आवश्यक है, मैंने 'रविशंकर शुक्ल व्याख्यानमाला' के अंतर्गत व्याख्यान देने का निमन्त्रण एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया। मेरे इस प्रयत्न का रायपुर के सुविज्ञ श्रोताओं ने जिस उत्साह के साथ स्वागत किया, उसके लिए मैं उनका आभारी हूं।

रविशंकर विश्वविद्यालय के भौतिकी-विभाग के अध्यक्ष प्रो॰ रत्नकुमार ठाकुर ने इन व्याख्यानों के आयोजन में तथा कई तकनीकी अंग्रेजी शब्दों के हिन्दीकरण में मुझे सहायता दी। उनका तथा उनके सहयोगी डॉ॰ गुहा और डॉ॰ सप्रे एवं भाषा विज्ञान-विभाग के अध्यक्ष प्रो॰ रमेश चन्द्र मेहरोत्रा का मैं इस सहायता के लिए ऋणी हूं।

कुलपति डॉ॰ श्रीवास्तव ने मेरा रायपुर-निवास सुखद बनाने के लिए जो अपनापन और आतिथ्य दिखाया, उसकी वजह से मेरे मन में इस यात्रा की एवं इन व्याख्यानों की मधुर स्मृतियां बनी रहेंगी।

—जयंत नार्लीकर

विषय-सूची

ो-50, गोरनगर, सागर विश्व वद्यालय, सागर—470003

प्राक्कथन

इन व्याख्यानों का विषय मेरे अध्ययन एवं अनुसंधान से सम्बन्धित है। ब्रह्मांड का अध्ययन ऋषि-मुनियों ने किया, दार्शनिकों ने किया, विचारकों ने किया, उसी प्रकार आधुनिक जमाने में वैज्ञानिक भी कर रहे हैं। उन प्रयत्नों की कुछ झलकियां मैं आपके सामने प्रस्तुत करना चाहता हूं।

पहला व्याख्यान तारों के बारे में है। रात को हमें तारे दिखाई देते हैं। दिन में सूर्य चमकता है, लेकिन सूर्य भी एक तारा है। इन तारों की जानकारी वैज्ञानिक विधि से किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है, यह बताने का प्रयास मैं करूंगा।

दूसरा व्याख्यान उस अथाह ब्रह्मांड के बारे में है, जिसकी जानकारी मानव को दूरबीनों की सहायता से मिल रही है। ब्रह्मांड की रचना के जो प्रतिरूप आजकल की चर्चा का विषय बने हैं, उनका विवरण आपको इस व्याख्यान में मिलेगा।

तीसरे व्याख्यान में मैं उस प्रश्न की चर्चा करूंगा, जो आजकल के अंतरिक्ष युग में किसी भी विचारशील व्यक्ति के सामने आता है। क्या हम पृथ्वीवासी इस विशाल ब्रह्मांड में अकेले हैं? या हमसे अधिक विचक्षण जीव हमारे चारों ओर आकाशगंगा में बिखरे है? क्या इस प्रश्न का उत्तर केवल तर्क से दिया जा सकता है या प्रेक्षण से भी?

आइए देखें, ब्रह्माड की गुत्थियां सुलझाने में विज्ञान मानव की किस प्रकार सहायता करता है।

तारों की जीवनगाथा

रात के समय यदि हम निरभ्र आकाश में दिखाई देनेवाले तारों का निरीक्षण करें, तो दूरबीन के बिना भी हमें कुछ विशेष बातें धीरे-धीरे महसूस होने लगती हैं। एक बात जो शीघ्र ही स्पष्ट होती है, वह यह कि सभी तारों की चमक एक-सी नहीं है। कुछ तारे अधिक तेजस्वी, तो कुछ धुंधले-से नजर आते हैं। यदि अधिक ध्यान से देखें, तो कुछ तारे छोटे और कुछ बड़े दिखाई देंगे। इसके अतिरिक्त, गौर से देखें तो रंग में भी फर्क मालूम पड़ेगा। यद्यपि अधिकांश तारे सुनहले दीखते हैं, तथापि कुछ तारों में नीलेपन की झलक मिलेगी और कुछ में लालिमा दिखाई देगी।

वास्तव में मानवी नेत्र तारों-तारों के बीच के सूक्ष्म भेदों को देखने में असमर्थ हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा था :

> न तु मां शक्यसे द्रष्टुं अनेनैव स्वचक्षुसा।
> दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे रूपमैश्वरम्॥

अतः जिस प्रकार भगवान का विश्वरूप दर्शन करने के लिए मानवीय नेत्र असमर्थ सिद्ध हुए, उसी प्रकार आधुनिक काल में विश्व में बिखरे तारों और अन्य चमत्कारपूर्ण वस्तुओं को देखने के लिए मानव को दूरबीनों तथा अन्य उपकरणों का सहारा लेना पड़ता है और इनके द्वारा हासिल की गई जानकारी का स्पष्टीकरण करने के लिए भौतिकी का और गणित का सहा[illegible] पड़ता है।

इन 'दिव्य' चक्षुओं के द्वारा जब हम तारों की दुनिया का अवलोकन करते हैं, तब तारों के विभिन्न प्रकार स्पष्ट हो जाते हैं। इन भेदों का अध्ययन करके आज के खगोलज्ञ तारों की जीवनी लिखने में सफल हुए हैं। तारे किस प्रकार पैदा होते हैं? वे क्यों और कितने काल तक चमकते रहते हैं? क्या उनका नाश भी होता है? ···और इन सब तारों के मुकाबले सर्वाधिक प्रकाशवान दिखाई देने वाले सूर्य का इन तारों की विशाल दुनिया में क्या स्थान है?

इन प्रश्नों के उत्तर पाने के लिए, आइए, पहले हम तारों के कुछ महत्त्वपूर्ण गुणों से परिचय कर लें।

द्युति

यद्यपि सूर्य हमें सर्वाधिक प्रकाशवान लगता है, तो भी वह एक सामान्य तारा है। वास्तव में, अन्य तारों की अपेक्षा वह पृथ्वी के बहुत निकट होने के कारण अधिक तेजोमय प्रतीत होता है। भौतिकी का यह नियम ही है कि कोई भी प्रकाशवान वस्तु प्रेक्षक से जितनी दूर जाए, उतनी ही उसकी द्युति कम होती जाएगी। द्युति का दूरी के वर्ग से प्रतिलोम अनुपात है। अब इस नियम का उपयोग करके हिसाब लगाइए। सूर्य की पृथ्वी से जितनी दूरी है, उसके लगभग तीन लाख गुनी दूरी पर निकटतम तारा मौजूद है। यदि सूर्य उतनी ही दूरी पर होता, तो हमें उसकी द्युति आज की द्युति के

3 लाख × लाख = 90 अरबवें

हिस्से जितनी कम महसूस होती।

इसका अर्थ यह है कि किसी भी तारे से प्रकाश के रूप में जितनी शक्ति बाहर आ रही है, यह ज्ञात करने के लिए हमें उस तारे की पृथ्वी से दूरी मालूम करनी पड़ेगी। तारों की हम से

•50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

दूरियां मालूम करने के लिए त्रिकोणमितीय तथा अन्य उपायों का सहारा लेना पड़ता है। इन उपायों का ज़िक्र मैं समयाभाव के कारण यहां नहीं कर सकूंगा।

लेकिन हमारी आकाशगंगा के अधिकतर तारों की दूरियां अब हमें ज्ञात हैं। उनकी जानकारी से हम उन तारों की ज्योति का अंदाज लगा सकते हैं और हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचना पड़ता है कि हमारा सूर्य एक सामान्य तारा है—न तो वह अत्यधिक शक्तिशाली है और न अत्यधिक कमजोर।

रंग

दूरबीनों द्वारा तारों के फोटो लेकर तथा उनसे मिलनेवाले प्रकाश का विश्लेषण करके हम उनके रंगों का पता लगा सकते हैं। यदि हम एक लोहे के दंड को आग में गरम करें, तो जैसे-जैसे उसका ताप बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे उसके रंग में परिवर्तन होता दिखाई देगा। पहले लाल, फिर पीला, फिर हरा, फिर नीला, इस प्रकार उसका रंग बदलता जाएगा। उसी प्रकार नील-वर्णीय तारे अधिक तप्त, पीतवर्णीय (सूर्य-जैसे) उस से कम ताप के, और रक्तवर्णीय तारे सब से कम ताप के होते हैं।

इस निष्कर्ष के पीछे भौतिकी का वह सिद्धांत है, जो प्रकाश-विकिरण के प्रमुख रंग का संबंध उसके ताप से जोड़ता है। कल्पना कीजिए कि एक बंद भट्टी में गरमी पहुंचाई जा रही है। भट्टी के अन्दर ऊष्मा विकिरण के रूप में इधर से उधर पहुंचती है। संतुलित अवस्था में इस विकिरण को 'कृष्णिका विकिरण' कहते हैं। इसमें प्रकाश की विभिन्न लम्बाइयों की तरंगें मौजूद रहती हैं और प्लांक नामक वैज्ञानिक द्वारा सिद्ध किए गए नियम के अनुसार विकिरण की ऊर्जा का बंटवारा इन तरंगों में होता है। सर्वाधिक लम्बी और सर्वाधिक छोटी सीमाओं के दरम्यान

एक विशिष्ट लम्बाई की तरंगों वाली प्रकाश-किरणों में सर्वाधिक ऊर्जा पाई जाती है। चूंकि दृश्य प्रकाश के रंग का सम्बन्ध लहरों की लम्बाई से जोड़ा गया है, अतः उपर्युक्त विकिरण में अधिकतम द्युति एक विशेष रंग में पाई जाती है। यदि ताप बढ़ाया जाए, तो सर्वाधिक ऊर्जा वाली तरंगों की लम्बाई घटती जाती है, जिसे वीन का नियम कहते हैं। निम्नलिखित सारणी में वीन के नियमानुसार ताप और रंग का सम्बन्ध दिखाया गया है।

रंग	परम ताप (सेंटीग्रेड में : 273° घटाइए)
लाल	3600—4600
नारंगी	4600—4900
पीला	4900—5000
हरा	5000—5900
नीला	5900—6400
बैंगनी	6400—7500

वास्तव में वीन के नियम के अलावा किसकी तरंग में तारे का विकिरण अधिकतम है, इस पर उसका रंग निर्भर करता है। अधिक सूक्ष्म अध्ययन से हम सूर्य के पृष्ठ भाग के ताप को 5500° सेंटीग्रेड पाते हैं। इसके मुकाबले आकाश में दिखाई देने वाले नीले तारों का पृष्ठ ताप 3000° से भी अधिक हो सकता है।

विश्लेषण के पश्चात् तारों के प्रकाश में विभिन्न रंग दिखाई देते हैं, जिनके समूह को स्पेक्ट्रम कहा जाता है। स्पेक्ट्रम से हम पृष्ठ भाग पर और उसके आसपास कौन-कौन से मूल तत्त्व मौजूद है, इसका पता लगा सकते है। स्पेक्ट्रम और ताप के आधार पर तारों का निम्नलिखित क्रम से वर्गीकरण किया गया है :

O, B, A, F, G, K, M, R, N

-50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003
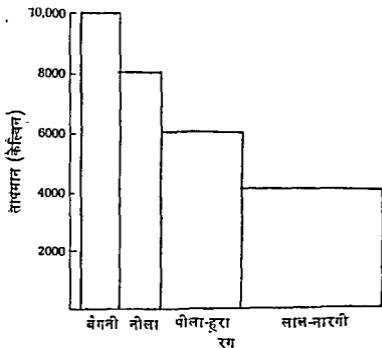
चित्र—1. वीन के नियमानुसार दृश्य प्रकाश के रंगों का ताप से सम्बन्ध

O वर्ग के तारे सर्वाधिक गरम होते हैं तथा उनमें हीलियम गैस प्रमुखता से मिलती है। सूर्य G वर्ग का तारा है।

व्यास

विकिरण-शक्ति और ताप दोनों गुणों में सूर्य मध्यम श्रेणी का तारा है। आकार के हिसाब से भी सूर्य न तो बहुत बड़ा है और न बहुत छोटा।

सूर्य की त्रिज्या लगभग 7 लाख किलोमीटर है। पृथ्वी की

सूर्य से दूरी लगभग 15 करोड़ किलोमीटर है। अब सोचिए, आकाश में कुछ तारे इतने विशाल हैं कि उनकी त्रिज्या 15 करोड़ किलोमीटर से भी अधिक है। इन्हें 'दानव' तारे कहते हैं। यदि सूर्य दानव तारा बन जाए तो वह पृथ्वी को भी निगल जाएगा।

सूर्य से बहुत छोटे तारे भी होते हैं। पृथ्वी की त्रिज्या 6400 किलोमीटर है। लेकिन पृथ्वी से भी छोटे तारे हैं, जो 'श्वेत-वामन' कहलाते हैं। इन दोनों की संहति सूर्य-जितनी होती है, किन्तु इनका घनत्व पानी की अपेक्षा लाख से दस लाख गुना हो सकता है। इनसे भी अधिक घनत्व वाले तारे 'न्यूट्रान' तारे कहलाते हैं, जिनका घनत्व पानी से लाख अरब गुना होता है। इनकी त्रिज्या 20 किलोमीटर से भी कम हो सकती है।

आइए, अब हम तारों की जीवनगाथा की ओर मुड़ें।

हर्टस्प्रुंग और रसेल का आरेख

कल्पना कीजिए कि पृथ्वी से बाहर का कोई विचक्षण जीव हम मानवों की जीवनगाथा जानना चाहता है। उसके सामने दो वैकल्पिक मार्ग हैं। पहला मार्ग यह कि वह पृथ्वी पर आकर किसी अस्पताल या प्रसूतिका गृह में जाकर किसी नव-जात शिशु का जन्म होते देखे और फिर उस शिशु के संपूर्ण जीवन का उसकी मृत्यु तक अवलोकन करे।

इस विकल्प में फायदा यह है कि उस जीव को एक मानव के जीवन की संपूर्ण जानकारी प्राप्त होगी। लेकिन इसके लिए उसे पृथ्वी पर साठ-सत्तर साल बिताने पड़ेंगे और इस अकेले उदाहरण के आधार पर पूरी मानव-जाति के बारे में कुछ निष्कर्ष निकालने पड़ेंगे। मानव-मानव में आपसी भेद इतने हैं कि उन सब की जानकारी इतना समय बिताने पर भी उसे केवल एक उदाहरण से नहीं मिल सकेगी।
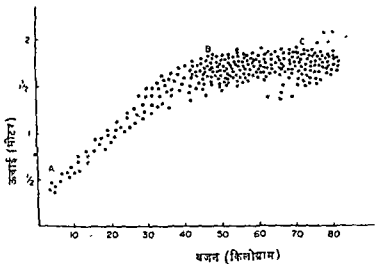
चित्र—2. किसी शहर के निवासियों की ऊंचाई और वजन का सम्बन्ध ऊपर के आलेख के अनुसार होगा। यह चित्र काल्पनिक है।

दूसरा रास्ता है बिलकुल ही अनूठा। इसमें उस जीव को किसी शहर में जाकर वहां की जनता का अवलोकन करना पड़ेगा। केवल कुछ ही दिनों में सभी आदमियों के कुछ गुण उसकी समझ में आ जाएंगे। उदाहरणार्थ, यदि वह सबकी ऊंचाई और वजन मालूम कर ले और यदि उन्हें एक आरेख में अंकित करे तो चित्र क्रमांक 2 में दिए गए काल्पनिक उदाहरण-जैसा कुछ दिखाई देगा। उस चित्र में बाईं ओर से बिन्दुओं का सिलसिला ऊपर चढ़ता, फिर काफी लम्बाई तक स्थिर ऊंचाई पर रहता, और फिर कुछ नीचे गिरता दिखाई देगा। बाईं ओर तथा दाहिनी ओर बिन्दुओं का घनत्व कम है, बीच में सर्वाधिक।

इसके अलावा दांतों की संख्या, बालों का रंग, इत्यादि कुछ गुणों का भी हमारा विचक्षण अतिथि निरीक्षण करता है। इस जानकारी के सहारे उसे सर्वसाधारण मानव के शरीर-गुणों में

कालानुसार होनेवाले परिवर्तनों का अन्दाज मिलता है। शरीर विज्ञान के सहारे फिर वह बचपन से बुढ़ापे तक होनेवाले शारीरिक परिवर्तनो को समझ सकता है।

यही दूसरा उपाय तारों की जीवनी समझने के लिए उपयोगी
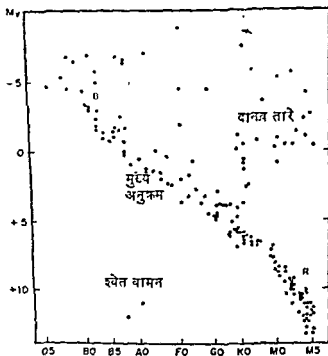
चित्र—3. हर्टस्प्रुग एवं रसेल का आरेख। क्षैतिज अक्ष में लॉगेरिथ्मीय मापक्रम पर तारों के पृष्ठ भाग का ताप बाईं से दाहिनी ओर घटता दिखाया गया है। उदग्र अक्ष पर तारों की ज्योति लॉगेरिथ्मीय मापक्रम पर ऊपर की ओर बढ़ती दिखाई गई है।

I. 4

गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

सिद्ध हुआ है। केवल सूर्य का अवलोकन करना न तो फ़ायदेमंद है और न सहजसाध्य ही। हजारों साल से मानव सूर्य का अवलोकन करता आया है, लेकिन उसे सूर्य में कोई खास परिवर्तन होते नहीं दिखलाई दिए। इसके बजाय यदि हम तारों के किसी समूह का प्रेक्षण करें, तो उसमें विभिन्न परिस्थितियों में पहुंचे अनेक तारे दिखाई देंगे। जिस प्रकार चित्र क्र० 2 में हमने दो मानवी गुणों को आलेखित किया, क्या उसी प्रकार हम इस समूह के तारों का भी गुणांकन कर सकते हैं ?

हर्टस्प्रुंग और रसेल नामक खगोलज्ञों ने इस प्रकार का चित्र बनाया, जिसे इन दोनों के नाम से —या उसके संक्षिप्त रूप से— 'HR आरेख' कहकर जाना जाता है। चित्र क्र० 3 में HR आरेख का नमूना दिखाया गया है। इसमें तारों की प्रकाश विकिरण शक्ति को उदग्र अक्ष में और उनके पृष्ठ भाग के ताप को क्षैतिज अक्ष में प्रदर्शित किया जाता है। अधिकतर तारे दाहिनी ओर के नीचे के कोने से बाईं ओर के ऊपरी कोने तक एक पट्टे में बिखरे हैं, जिसे 'मुख्य अनुक्रम' कहते हैं। ऊपर के दाहिनी ओर के कोने में दानव तारे पाए जाते हैं और पट्टे के नीचे श्वेत वामन।

इस प्रकार का तारों का बंटवारा अनेक तारा-गुच्छों में दिखाई देता है। इसकी कारण-मीमांसा करने के लिए हमें अब भौतिकी के नियमों का सहारा लेना पड़ेगा।

एडिंगटन के समीकरण

इंग्लैंड के प्रसिद्ध सैद्धांतिक खगोलज्ञ एडिंगटन ने तारे के अंतर्गत संतुलन तथा उसमें से बाहर आने वाली गरमी के प्रवाह के बारे में दीर्घ चर्चा करके चार समीकरण लिखे। तारे का संतुलन दो प्रमुख बलों पर निर्भर है। एक बल है तारे के स्वयं-जनित गुरुत्वाकर्पण का। तारे के विभिन्न घटक एक-दूसरे को

आकर्षित करते हैं, जिसकी वजह से तारे का संकुचन होना चाहिए। यदि इस नियम का हम सूर्य पर प्रयोग करें, तो एक आश्चर्यजनक परिणाम हमें मिलेगा कि सूर्य का एक बिंदु में संकुचन आधे घंटे के भीतर हो चुकेगा।

लेकिन सूर्य भगवान तो हजारों क्या, करोड़ों वर्षों से अपना रूप टिकाए हुए हैं। इसका अर्थ यह है कि गुरुत्वाकर्षण के बल का मुकाबला करने वाला एक दूसरा बल तारे में मौजूद है। वह बल है तारे में निहित गैस और विकिरण के दाब का। सूर्य का बाहरी ताप 6000 अंश से कुछ कम ही है, लेकिन उसकी गरमाहट अदर की ओर बढ़ती जाती है, यहा तक कि उसके क्रोड, अर्थात् केंद्र भाग का ताप एक करोड़ अंश से भी अधिक होगा। इस बदलते ताप के कारण अंदर की ओर दाब बढ़ता जाता है और सूर्य (या अन्य तारे) को संतुलन प्राप्त होता है।

सूर्य से जो रोशनी आती है, वह इसी अंदर के तप्त भाग से बाहर आने वाले विकिरण से आती है। यह विकिरण बहुत अंशों में सूर्य के अन्दर जज्ब हो जाता है और बचा-खुचा भाग हमें प्रकाश के रूप में मिलता है। एडिंगटन के समीकरण अब तक दिए गए विवरण को गणित और भौतिकी के सिद्धांतों पर प्रतिष्ठित कराते हैं।

लेकिन जब ये समीकरण—लगभग साठ साल पहले—एडिंगटन ने बनाए, तब उन्हें एक और समीकरण की आवश्यकता महसूस हुई। सूर्य के (या अन्य तारे के) संतुलन के लिए केंद्र भाग को अति तप्त रखने के लिए वहा ऊर्जा-स्रोत का होना आवश्यक है। वह स्रोत किस प्रकार का है, इसकी जानकारी वैज्ञानिकों को 1920-30 के ज़माने में उपलब्ध नहीं थी।

फिर भी प्रज्ञाशील एडिंगटन ने अनुमान किया कि हो सकता है कि केंद्र के करोड़ से अधिक ताप मे परमाणुओं के नाभिकों

का संलयन हो और इस कारण ऊर्जा बाहर निकले। यदि हाइ-ड्रोजन के चार नाभियों को जोड़ें, तो उनसे हीलियम का एक नाभिक बन सकता है, जिसकी संहति हाइड्रोजन के चारों नाभिकों की संपूर्ण संहति से कुछ कम है। चूंकि संहति और ऊर्जा का संबंध आइंस्टाइन के प्रसिद्ध समीकरण

$$E = MC^2$$

द्वारा मालूम था, इसलिए एडिंगटन का कहना था कि संहति में जो घाटा हुआ, वह ऊर्जा के रूप में हमें वापस मिलेगा।

तत्कालीन नाभिकीय भौतिकी नवीन रूप में कुछ अपरिपक्व होने के कारण एडिंगटन की उपर्युक्त कल्पना उनके सहयोगी भौतिक-विज्ञानी मानने के लिए तैयार नहीं थे। "धन विद्युत् वाले चार मूल कण प्रतिकर्षण से एक-दूसरे को दूर फेंकेंगे—वे पास आ ही नहीं सकते और उनका संलयन होना असंभव है। तारों के केंद्र भाग करोड़ से अधिक तक भले ही गरम हों, पर वहां हाइड्रोजन का हीलियम में रूपांतरण होकर ऊर्जा का बाहर आना संभव नहीं।" इस निष्कर्ष ने एडिंगटन को हतोत्साह नहीं किया। उन्होंने कहा, "हमारे जो आलोचक ऐसा समझते है कि ऐसी प्रतिक्रिया के लिए तारे पर्याप्त रूप से गरम नहीं है, उनसे हम विवाद नहीं करना चाहते। हम उनसे इतना ही कहेंगे—जाइए, इससे भी गरम स्थान पता लगाइए।"

इतिहास बताता है कि एडिंगटन की कल्पना सही निकली। 1930-40 के दशक में नाभिकीय बल का पता चला और भौतिक-विज्ञानियों ने यह मान लिया कि नाभिकीय बल के आकर्षण के कारण हाइड्रोजन के चार नाभिकों का संलयन होकर ह का एक नाभिक बन सकता है। 1940 के कुछ पहले ही बेथे नामक भौतिक-विज्ञानी ने पांचवें समीकरण को तारों की रचना का प्रश्न हल कर डाला। जिस प्रश्न को

काल से मानव सुलझाने का प्रयास करता आया था, उस प्रश्न का— कि 'तारे क्यों चमकते हैं ?'—उत्तर 45 साल पहले मिला।

तारों की चर्चा करने के पहले एक बात का ज़िक्र करना उचित होगा। 1950 के आसपास हाइड्रोजन बम बनाने का ज्ञान मानव ने हासिल किया। इस बम से होनेवाला ऊर्जा का प्रचंड उद्रेक उपर्युक्त नाभिकीय अभिक्रिया की वजह से ही होता है। परन्तु तारों के अंतरंग में गुरुत्वाकर्षण के कारण जो प्रचंड दाब होता है, उसके कारण वहां होनेवाली अभिक्रिया विस्फोटात्मक रूप से न होकर संतुलित रूप से होती है। संलयन को संतुलित रूप से पृथ्वी पर करवाने में मानव अभी सफल नहीं हुआ है। जब 'फ्यूज़न रिएक्टर' बनाने में वह कामयाब होगा, तब हमारी ऊर्जा की कठिनाइयां हल हो जाएंगीं।

तारों का जन्म, शैशव, और किशोरावस्था

एडिंगटन के समीकरण तब लागू होते हैं, जब तारे के अंतरंग में नाभिकीय प्रतिक्रियाएं ऊर्जा का निर्माण करने लगती हैं। लेकिन ऐसी परिस्थिति कब और कैसे आती है, यह जानने के लिए हमें तारों के जन्म की जानकारी हासिल करनी पड़ेगी।

जैसा कि आप फोटो क्रमांक 1.[1] में देखते हैं, हमारी आकाश-गंगा में सिर्फ तारे ही नही, बल्कि तारों के बीच विस्तीर्ण प्रदेश में गैस और धूलिकण भी होते हैं। यह गैस सर्वत्र एक-जैसी बिखरी नही होती—उसका घनत्व कही अधिक, कहीं कम होता है। अधिक घनत्व के भागों को हम 'गैस मेघ' कहते हैं।

कल्पना कीजिए कि कोई गैस मेघ अपने आप के गुरुत्वाकर्षण बल के कारण संकुचित होने लगता है। गैस को दबाने पर उसका

---

1. फोटो चित्रों से अलग हैं। इन्हें पृ० 24 के बाद देखें।

ताप बढता है और उसके दाब तथा घनत्व में वृद्धि होती है। इस संकुचन-क्रिया का विशेष अध्ययन जापानी खगोलज्ञ हायाशी ने किया था, इस कारण इसे 'हायाशी-काल' कहा जाता है। हायाशी-काल में तारे के आंतरिक भाग में उसके गरम होने के कारण अवरक्त प्रकाश उत्पन्न होता है, जिसका अधिकांश बाहर आता है। यह काल तारे का प्रसूतिकाल माना जाता है। फोटो-क्रमांक 2 में दिखाए गए मृग नक्षत्र के विशाल मेघ में इस प्रकार की घटनाओं का आभास मिलता है।

लेकिन प्रकाशवान होने पर भी यह मेघ का गोला तारा नहीं कहा जा सकता। तारा होने के लिए उसके मध्य भाग का ताप इतना बढ़ना आवश्यक है कि वहां नाभिकीय अभिक्रियाएं शुरू हो सकें। जब ये अभिक्रियाएं चालू हो जाती हैं, तब एडिंगटन के समीकरणों के अनुसार तारा स्थिर दशा में पहुंचता है। अब स्वयं पैदा की गई नाभिकीय ऊर्जा के द्वारा तारा अपने को प्रकाशित रखता है।

यहां दो बातें स्पष्ट करनी आवश्यक हैं। एक तो यह कि तारों का निर्माण एक-एक करके नहीं होता। गैस मेघ के संकुचन-काल में मेघ के कई टुकड़े हो जाते हैं और प्रत्येक भाग हायाशी-काल से गुज़र कर तारे का स्वरूप प्राप्त करता है। इस प्रकार एक ही समय में अनेक तारे पैदा होते हैं।

दूसरी बात है ग्रहोत्पत्ति के बारे में। जिस मेघ के टुकड़े से सूर्य बना, उसी टुकड़े से ग्रह भी बने, ऐसी आजकल की धारणा है। मेघ का गोला संकुचन-काल में एक अक्ष के चारों ओर परिभ्रमण करता है। इसमें चुंबकीय क्षेत्र के भी होने की संभावना है। ऐसी परिस्थिति में गोले के बाहरी भाग चपटी तश्तरी के रूप में गोले के चारों ओर घूमते हैं। इस तश्तरी से ग्रह बने, ऐसा तर्क दिया जाता है। इस सिद्धांत को अभी परिपक्व रूप

प्राप्त नहीं हुआ है। इसलिए आज यह कहना मुश्किल है कि क्या सभी तारों की ग्रह-मालाएं होती हैं ?

मुख्य अनुक्रम, दानव तारे, और तारों का विस्फोट

जैसा हमने देखा, मुख्य अनुक्रम पर अधिकतर तारे दिखाई हैं। इसका कारण यह है कि हाइड्रोजन से हीलियम में बदलने की अभिक्रिया बहुत लंबे काल तक चलती है। तब तक तारे के आकार, द्युति, और ताप में कोई खास नाटकीय ढंग के परिवर्तन नहीं होते। सूर्य में यह अभिक्रिया 5 अरब वर्षों से होती आ रही है और इतने ही अरसे तक भविष्य में भी होती रहने की संभावना है। साधारणतया अधिक संहति वाले तारों के अंतरंग में ताप अधिक होता है और उनमें यह अभिक्रिया अधिक तेजी से होती है, इसलिए मुख्य अनुक्रम पर छोटे तारे अधिक काल तक तथा बड़े तारे कम काल तक रहते हैं।

लेकिन किसी भी तारे के जीवन में ऐसा काल आता है, जब उसके क्रोड का हाइड्रोजन पूर्णतया समाप्त हो जाता है और ईंधन के अभाव में नाभिकीय अभिक्रिया बंद हो जाती है। ऐसी अवस्थाओं में तारे के क्रोड का दाब कम होने लगता है और गुरुत्वाकर्षण के बल का प्रभाव बढ़ जाता है। नतीजा यह कि तारे के मध्य में स्थित हीलियम का गोला सिकुड़ने लगता है लेकिन इसके कारण उस गैस का ताप बढ़ने लगता है और बढ़ते-बढ़ते इतना हो जाता है कि हीलियम के नाभिकों के संलयन की अभिक्रिया संभव हो जाती है।

इस अभिक्रिया में हीलियम के तीन नाभिकों के जुड़ने से कार्बन का एक नाभिक बनता है—और इसके साथ ऊर्जा भी पैदा होती है। ऊर्जा के कारण गैस में नया दाब निर्मित होता है, जो अब गोले के संकुचन को रोकने में सफल होता है।

अरघान (कविता [illegible])
सी-50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

लेकिन ताप में हुई इस वृद्धि के कारण तारे का बाहरी भाग फूलने लगता है और साथ ही उसके पृष्ठभाग का ताप घटने लगता है। अब तारा दानवी दशा में पहुंच गया। सूर्य जब इस अवस्था में पहुंचेगा, तो फूलकर पृथ्वी तथा मंगल तक को निगल जाएगा। लेकिन घबराने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि यह संकट पृथ्वी पर आने के लिए अभी अरबों वर्षों का काल बाकी है।

दानव तारे की अवस्था में कुल काल-खंड कम ही बीतता है। जहां मुख्य अनुक्रम पर तारे का अरबों वर्षों का काल बीतता है, वहां दानवी अवस्था में उसका सहस्रांश काल भी नहीं। इसलिए दानव तारे इतनी कम संख्या में दिखाई देते हैं।

दानवी अवस्था का अन्त कैसे होता है? यदि तारे की संहति सूर्य से पांच गुनी से कम ही है, तो तारे में छोटे-छोटे विस्फोट होकर उससे तप्त गैस बाहर निकल पड़ती है। इस प्रकार तारे की संहति घटती जाती है और आखिर वह श्वेत वामन के रूप में अपने जीवन का अन्तिम काल बिताता है। इस अवस्था में उसके अन्तरंग में नाभिकीय अभिक्रियाएं नहीं चलतीं और उसका दाब क्वाण्टम सिद्धांत के एक नियम के अनुसार नियत किया जाता है। समयाभाव के कारण मैं इस विषय की अधिक चर्चा नहीं कर सकूंगा, केवल इतना ही कहूंगा कि भारतीय वैज्ञानिक चंद्रशेखर ने लगभग 45 वर्ष पहले यह सिद्ध किया कि श्वेत वामन की संहति सूर्य से 44% से अधिक नहीं हो सकती। यह संहति-सीमा आज 'चंद्रशेखर-सीमा' के नाम से जानी जाती है।

बड़े तारों का भविष्य कुछ अधिक भयंकर है। सूर्य से पांच गुनी से अधिक संहति वाले तारे दानवी अवस्था के अन्तिम काल में अपना संतुलन नहीं टिकाए रख सकते। उनका बाहरी भाग एक प्रचंड विस्फोट में बाहर फेंक दिया जाता है और अन्दर

बचता है अत्यन्त तप्त छोटा-सा गोला। यही गोला न्यूट्रान तारे का रूप धारण करता है। लेकिन श्वेत वामन के समान न्यूट्रान तारे के संतुलन के लिए यह आवश्यक है कि उसकी संहति सूर्य की दुगनी से अधिक न हो। यदि तारे के विस्फोट के बाद बचे अवशेष की संहति इससे अधिक है, तो तारों का भविष्य और भी अद्भुत होगा। इसकी चर्चा हम आगे करेंगे। न्यूट्रान तारे रेडियो-स्पंदकों के रूप में दिखाई देते हैं।

विस्फोट की अवस्था को प्राप्त तारे को 'अधिनव तारा' कहते हैं। सन् 1054 में 4 जुलाई को हमारी आकाशगंगा का एक तारा-विस्फोट पृथ्वी से देखा गया। चीन, जापान, अरब तथा दक्षिण अमेरिका में इस घटना के सबूत मिलते हैं। आज भी विस्फोट का स्थान खगोलज्ञों की चर्चा का विषय है। उसकी तस्वीर फोटो क्र० 3 में देखिए।

हमारी आकाशगंगा में तारा-विस्फोट लगभग 100 वर्ष में एक बार होता है। लेकिन आकाशगंगा का आकार बहुत बड़ा होने के कारण केवल पास के विस्फोट ही यहां से दिखाई देते हैं। क्रैब नेब्युला, जिसे आपने अभी देखा, विस्फोट के नौ शताब्दियों बाद भी इतना चमकदार और वैदिप्त्यपूर्ण है। चीनी दर्शकों के द्वारा लिखे इतिहास में उद्धरण मिलता है : 'यह विस्फोट होते समय तारा इतना चमकदार था कि दो दिन सूर्य के रहते भी आकाश में दिखाई देता था।' इससे हम अनुमान कर सकते हैं कि यह घटना कितनी असामान्य थी। उसके बाद आज तक केवल दो और विस्फोट हमारी आकाशगंगा में होते दिखाई दिए, जिनके बारे में टायको ब्राहे और केप्लर ने अपने अनुभव लिखे हैं। क्रैब नेब्युला में नियमित रूप से स्पंदन करने वाला एक स्पंदन पाया जाता है।

हमारी आकाशगंगा का यह चित्र सभी दिशाओं के फोटोग्राफों को जोडकर ा है। (हेल वेधशाला का चित्र)

—2 मृग नक्षत्र मे ा नीहारिका मे नए ी उत्पत्ति का संकेत मिलता है। वेधशाला का चित्र)
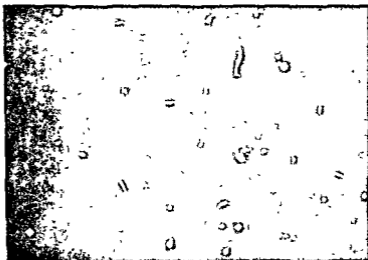
फोटो—6 करोना बोरियालिस नामक गैलेक्सियों का समूह (हेल वेधशाला का चित्र)

फोटो—7 अंतरिक्ष-दूरबीन, जो नासा द्वारा 1985 में अंतरिक्ष में छोड़ी जाएगी।

फोटो—8 चंद्रमा पर पहला मानव चरण-चिह्न। अंतरिक्ष-यात्रा का आरंभ यहीं से हुआ।
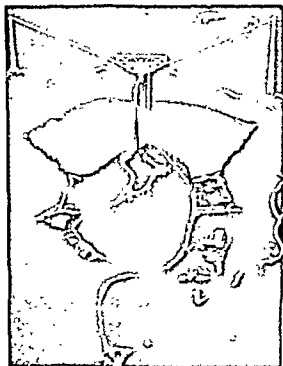
फोटो—9 अरिसीबो, पोर्टोरीको की 1000 फुट व्यास की विशाल रेडियो दूरबीन जो एक गड्ढे में स्थित है। हमारी आकाशगंगा से दूर तक संदेश भेजने या सुदूर गैलेक्सियों से आने वाले संदेशों को ग्रहण करने की क्षमता इस दूरबीन में है।

फोटो—10 प्रोजेक्ट सायक्लॉप्स का काल्पनिक चित्र।
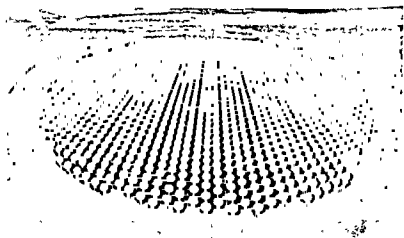
प्रस्थान (कवता सग्र :
सी-50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

मूल तत्वों का सृजन

विस्फोटावशेषों की चर्चा करने के पहले एक महत्वपूर्ण बात बतानी आवश्यक है। हमने देखा कि हाइड्रोजन का रूपान्तरण हीलियम में और हीलियम का कार्बन में करने में तारे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उत्तरोत्तर भारी नाभिकों के संलयन की यह शृंखला यहीं समाप्त नहीं होती। दानव तारे के गर्भ में जब हीलियम पकनो बन्द हो जाती है, तब गर्भ-भाग का संकुचन होकर उसके ताप में वृद्धि होती है और उसके बाद कार्बन और हीलियम का संयोग होकर ऑक्सीजन का निर्माण होता है।

1957 में बर्बिज दंपति, फ्रेड हॉयल और विलियम फ़ाउलर ने एक महत्त्वपूर्ण अनुसंधानात्मक लेख लिखा, जिसमें उन्होंने सिद्ध किया कि अधिकतर रासायनिक मूलतत्त्व तारों के गर्भ भाग में नाभिकीय अभिक्रियाओं द्वारा बनते हैं और अन्त में अधिनवतारे के विस्फोट में वे बाहर आकाश में फेंके जाते हैं। कार्बन, आक्सीजन, निआन, सल्फर⋯इत्यादि से लेकर लोहे तक के मूल तत्त्वों का निर्माण नाभिकों के संलयन द्वारा तथा और भारी मूल तत्त्वों का निर्माण अन्य नाभिकीय अभिक्रियाओं द्वारा तारों में ही होता है।

इस प्रकार आपके लोहे के उपकरण, सोने के गहने, पेंसिल का ग्रेफाइट जैसे पृथ्वी पर जो कुछ भी पदार्थ हैं, सभी किसी समय तारों के अन्तरंग में अरबों अंश तक के ताप में पककर आए हैं। इससे कल्पना कोजिए कि आसमान के दूर-दूर के तारे हमारी पृथ्वी से कितना व्यापक सम्बन्ध रखते हैं।

कृष्णविवर

अधिनवतारे के विस्फोट में उसका बाहरी भाग बिखर जाता है, लेकिन उसका अति तप्त क्रोड बचा रहता है। यदि इसकी

सहति सूर्य से दुगुनी तक हो, तो यह भाग न्यूट्रान तारे के रूप में अपना शेष जीवन बिताएगा। लेकिन यदि अवशिष्ट भाग इससे भारी निकला, तो ?

आज तक की भौतिकी पानी से लाख अरब गुने घनत्व वाले पदार्थों के बारे में कुछ जानकारी देती है। उसी के आधार पर न्यूट्रान तारों की कल्पना सामने आई। लेकिन यदि सूर्य से तिगुना या अधिक भारी तारा इस परिस्थिति में अपने को पाए, तो उसके अन्तरग का दाब उसके गुरुत्वाकर्षीय बल को नहीं रोक सकता। ऐसी दशा में तारों का सिकुड़ना प्रारम्भ हो जाता है।

गुरुत्वाकर्षीय बल में ऐसा विचित्र गुण है कि यदि अन्य बल इसके सामने हार मान लें, तो इसकी शक्ति बढ़ती जाती है। जैसे-जैसे तारे का रूप छोटा होता जाता है, उसका अपना गुरुत्वाकर्षण बढता जाता है और उसके सिकुड़ने का वेग बढ़ने लगता है। बिना लगाम के घोड़े की तरह यह तारा बढ़ते वेग से छोटा होने लगता है और उसकी परिणति आखिरकार एक बिन्दु में ही होती है।

लेकिन दूर से देखनेवाले को तारे का यह अन्त दिखाई नहीं पड़ता, क्योंकि जैसे-जैसे तारे का घनत्व बढ़ता जाता है, उसके पृष्ठभाग का गुरुत्वाकर्षण भी बढ़ता जाता है। यदि हम पृथ्वी पर एक गेंद उछालें, तो वह गिर जाती है। लेकिन एक निश्चित वेग-सीमा को पार करके यदि राकेट छोड़ें, तो वह वापस नहीं आता। यह वेग-सीमा पृथ्वी के लिए लगभग ग्यारह किलोमीटर प्रति सेकेंड है। जितना गुरुत्वाकर्षण अधिक होता है, उतनी ही यह सीमा भी अधिक होती है। यदि हम पृथ्वी को चारों ओर से दबाकर उसका व्यास चौथाई कर दें, तो उपर्युक्त वेग-सीमा दुगुनी, अर्थात् बाईस किलोमीटर प्रति सेकेंड हो जाएगी। इसका मतलब यह है कि कोई भी वस्तु यदि इस सीमा से कम

वेग से पृथ्वी तल से फेंकी जाए, तो वह फिर पृथ्वी-तल पर ही आ गिरेगी।

क्या ऐसी स्थिति की कल्पना की जा सकती है, जब पृथ्वी दबा-दबाकर इतनी छोटी बना दी जाए कि यह वेग-सीमा प्रकाश वेग (जो तीन लाख किलोमीटर प्रति सेकेंड है) से भी अधिक हो? फोटो क्रमांक 4 से पता चलता है कि इसके लिए पृथ्वी कितनी छोटी होनी चाहिए। तब उसका व्यास डेढ़ सेंटीमीटर से अधिक नहीं होना चाहिए। ऐसी दशा में पृथ्वी-तल से प्रकाश भी दूर नहीं जा सकता। इस अवस्था को 'कृष्ण विवर' कहते हैं।

यद्यपि पृथ्वी का इस प्रकार संकुचित होना संभव नहीं लगता, फिर भी आकाश के कुछ तारों की भविष्य में ऐसी दशा आ सकती है। जैसा कि अभी हमने देखा, यदि अधिनवतारा-विस्फोट के फलस्वरूप अवशिष्ट तारे की संहति सूर्य की दुगुनी से अधिक हो, तो वह लगातार सिकुड़ता जाता है। ऐसे तारे का आकार जब एक निश्चित सीमा से घट जाता है, तब वह कृष्ण
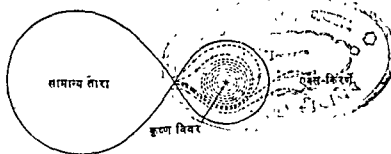
चित्र 4. यदि युग्म तारे मे से एक कृष्णविवर हो, तो उपर्युक्त चित्र में उसके पड़ोसी तारे के परिभ्रमण को देखकर उसका अस्तित्व सिद्ध किया जा सकता है। पड़ोसी तारे के पृष्ठभाग से गैस आकर्षित होकर

विवर पर गिरती है और इस प्रक्रिया मे उससे एक्स-किरणें निकलती हैं। विवर बन जाता है। सूर्य से तिगुनी संहति वाले तारे का व्यास इस अवस्था में अठारह किलोमीटर से कम हो जाता है।

चूंकि कृष्ण विवर से प्रकाश नही निकलता, इसलिए उसका अस्तित्व सिद्ध करना मुश्किल है—लेकिन असंभव नहीं, क्योंकि कृष्ण विवर अदृश्य होने पर भी आसपास की वस्तुओं पर गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव डालता है। यदि दो तारे (देखिए चित्र क्रमांक 4) एक-दूसरे के चारों ओर घूमते हों और उनमें से एक कृष्ण विवर हो, तो दूसरे तारे की गति का अवलोकन करके खगोलज्ञ कृष्ण विवर का अस्तित्व सिद्ध कर सकते हैं। इसी तर्क से सिग्नस X—1 नामक एक्स-किरणों के स्रोत में स्थित युग्म तारे में से एक कृष्ण विवर है, ऐसा माना जाता है।

उपसंहार

यह रही संक्षेप में तारों की जीवनगाथा। गैस मेघ में जन्म लेकर, जीवनभर चमककर, तथा अपने पेट में मूल तत्त्वों का निर्माण करके ये तारे अन्त में या तो श्वेत वामन बनते हैं, या विस्फोट में टूट-फूट कर न्यूट्रान तारे या कृष्ण विवर के रूप में अपनी बची-खुची आयु बिताते हैं। खगोलीय प्रेक्षण, खगोल-भौतिकी समीकरण तथा नाभिकीय अभिक्रियाओं के ज्ञान पर यह जीवन गाथा रची हुई है। विज्ञान के अनेक अंग आपसी सहयोग से मानव के सामने प्रस्तुत पहेलियां किस प्रकार सुलझाते हैं, इसका यह एक अच्छा उदाहरण है।

2
ब्रह्मांड की उत्पत्ति कब हुई ?

ब्रह्मांड की विस्तृति

तारों की दुनिया छोड़कर अब हम उससे कहीं अधिक विस्तृत क्षेत्र में प्रवेश करेंगे। इस क्षेत्र में हमें संपूर्ण ब्रह्मांड के बारे में आजकल की वैज्ञानिक विचारधाराओं की झलक मिलेगी। इस विषय को हम 'ब्रह्मांडिकी' के नाम से संबोधित करेंगे।

वास्तव में ब्रह्मांड कितना विस्तृत है, यह स्पष्ट रूप से कहना कठिन है। ब्रह्मांड का विस्तार कहां तक है, इसकी कुछ जानकारी हमारी दूरबीनें देती हैं। लेकिन दूरबीनों की देख सकने की सीमा के बाहर भी ब्रह्मांड फैला है। हम पहले इस विशाल ब्रह्मांड के कुछ दृश्य दिखाएंगे। इसके लिए यह आवश्यक है कि दूरी और संहति का आकलन करने के लिए हम उपर्युक्त मात्रक निश्चित कर लें।

दूरी-मापन के लिए हम प्रकाशवर्ष का इस्तेमाल करेंगे। प्रकाश एक सेकेंड में तीन लाख किलोमीटर दूरी तय करता है। इस चाल से वर्ष भर में वह जितनी दूरी तय कर सकता है, उसे 'प्रकाशवर्ष' कहते हैं। यह लगभग दस हजार अरब किलोमीटर होता है। संहति यदि ग्राम या किलोग्राम में मापी जाए, तो दैनिक जीवन के लिए ठीक है, लेकिन खगोलीय पिंडों के लिए नहीं। इसके लिए हम सौर संहति को मात्रक के रूप में अपनाएंगे। सौर संहति, यानी सूर्य की संहति लगभग दो हजार अरब अरब अरब किलोग्राम होती है। इतने बड़े पैमाने भी ब्रह्मांड का अनुमान कराने में पूर्णतया समर्थ नहीं हैं, लेकिन हमें इनसे ही

चित्र 5 हमारी आकाशगंगा का आरेख। सूर्य की स्थिति बाणचिह्न से दिखाई गई है।

काम चलाना होगा।

चित्र क्रमांक 5 में आप हमारी आकाशगंगा का चित्र देखते हैं। यह एक चपटी रोटी के आकार की है, जो बीच में थोड़ी फूली है। इस रोटी का व्यास एक लाख प्रकाशवर्ष है और इसमें सौ अरब से भी अधिक तारे हैं। पिछली शताब्दी में खगोलज्ञों की धारणा थी कि हमारा संपूर्ण विश्व हमारी आकाशगंगा में ही समाहित है, लेकिन अंततोगत्वा यह धारणा गलत सिद्ध हुई।

बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में हारलो शेपली, एडविन हबल एवं मिल्टन ह्यूमासन नामक अमेरिकन खगोलज्ञों ने यह सिद्ध किया कि हमारा सौर-परिवार हमारी आकाशगंगा के मध्य में न होकर केन्द्र से दो-तिहाई दूरी पर है (देखिए चित्र क्रमांक 5) और ब्रह्मांड में हमारी आकाशगंगा जैसी सैकड़ों आकाशगंगाएं अर्थात् गैलेक्सियां मौजूद हैं। फोटो क्रमांक 5 में आप देखते हैं हमारी पड़ोसन ऐंड्रोमिडा गैलेक्सी, जो हमारी आकाशगंगा-जैसी ही है और उससे लगभग बीस लाख प्रकाशवर्ष दूरी पर स्थित है। पहले लोगों की यह (गलत) धारणा थी कि हमारी आकाशगंगा में स्थित अनेक नीहारिकाओं में से ऐंड्रोमिडा भी एक नीहारिका है।

फोटो क्रमांक 6 में गैलेक्सियों का एक समूह है, जो हमारी आकाशगंगा से 130 करोड़ प्रकाशवर्ष की दूरी पर स्थित हैं।

परधान (कवता संग्रह :
सी-50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

जहां तक हमारी उत्कृष्ट दूरबीनें देख पाती हैं, वहां तक इस प्रकार के गैलेक्सियों के समूह बिखरे दिखाई देते हैं। यदि हम हिसाब लगाएं तो इस प्रकार दिखाई देनेवाले ब्रह्मांड के भाग की संहति सौ अरब अरब सौर संहतियों से अधिक है।

चूंकि प्रकाश का वेग सीमित है, इसलिए दूरस्थित गैलेक्सियां जो हमें आज दिखाई देती है, वास्तव में अपने पुरातन रूप में दीखती हैं। जैसे, फोटो क्र० 6 में गैलेक्सियों का जो समूह आप देख रहे हैं, वह उसके आधुनिक रूप में नहीं, बल्कि 130 करोड़ वर्ष पहले के रूप में है—क्योंकि वहां से निकली प्रकाश किरणें आज हमारे पास तक पहुंचने के लिए 130 करोड़ वर्ष यात्रा कर चुकी हैं।

इस प्रकार दूरी, संहति और काल—तीनों ही दृष्टियों से ब्रह्मांड इतना विशाल है कि दैनिक जीवन के अनुभव के आधार पर उसका अनुमान लगाना असंभव है। इसीलिए हमें गणित और विज्ञान के चक्षुओं का सहारा लेना पड़ता है। गणित और विज्ञान के सहारे हम ब्रह्मांड का प्रतिरूप बनाएंगे और खगोलीय प्रेक्षणों द्वारा उसकी जांच-पड़ताल करेंगे। इन प्रतिरूपों को बनाने में हबल की एक खोज महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई। पहले हम उसकी चर्चा करेंगे।

हबल का नियम

हबल ने अपनी यह खोज 1929 में प्रकाशित की। उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

आसपास की गैलेक्सियों से आनेवाले प्रकाश का स्पेक्ट्रमी विश्लेषण करने पर हबल को यह पता लगा कि सामान्य स्पेक्ट्रम में अवशोषण-रेखाओं को जिन निश्चित स्थितियों में पाया जाना चाहिए था, वे वहां नहीं थीं। चित्र क्रमांक 6 में O एक प्रेक्षक है

और O एक गैलेक्सी है। G से O की ओर आनेवाले प्रकाश में पाई जानेवाली अवशोषण-रेखाएं भूस्थित प्रयोगशाला की अपेक्षा अधिक तरंग दैर्घ्यवाली दिखाई देती हैं। उदाहरण के तौर पर, पार्थिव कैलशियम की H रेखा का तरंग दैर्घ्य 3968.5 A° होना चाहिए (1 A° = 1 ऐंग्स्ट्रम = मिलीमीटर का करोड़वां हिस्सा)। यदि प्रेक्षण में वह 4762.2 A° पाया गया, तो खगोलज्ञ इसे 'अभिरक्त विस्थापित' कहेगा। चूंकि स्पेक्ट्रम में लाल रंग सर्वाधिक तरंग दैर्घ्य पर पाया जाता है, इसलिए उपर्युक्त उदाहरण में अवशोषण-रेखा लाल रंग की ओर सरकी हुई मालूम पड़ती है। यह विस्थापन कितना है? प्रेक्षण में पाए गए तरंग दैर्घ्य के विस्थापन (793.7 A°) को अपेक्षित तरंग दैर्घ्य से भाग दीजिए। इसे 'अभिरक्त विस्थापन' कहते हैं। हमारे उदाहरण में उत्तर आएगा 0.2, इसका अर्थ है कि अभिरक्त विस्थापन 0.2 है।

हबल-ह्यूमासन की जोड़ी ने देखा कि किसी गैलेक्सी के स्पेक्ट्रम की सभी रेखाएं एक ही अभिरक्त विस्थापन वाली दीखती हैं, जिसे उस गैलेक्सी का अभिरक्त विस्थापन कहते हैं। चित्र क्र० 6 में दिखाई गई गैलेक्सी का अभिरक्त विस्थापन 0.2 इसके अलावा हबल ने यह भी निष्कर्ष निकाला कि यह

चित्र 6. निरीक्षक O से दूर जानेवाली गैलेक्सी G से आनेवाले प्रकाश में अभिरक्त-स्थापन दिखाई देता है। इसका कारण डॉप्लर प्रभाव हो सकता है।
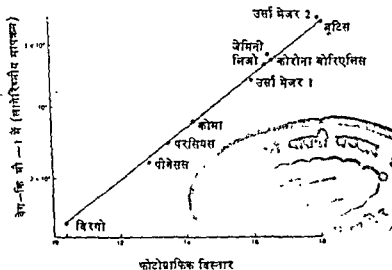
चित्र 7. हबल का नियम—गैलेक्सियों का हमसे दूर जाने का वेग उनकी दूरी के अनुपात में बढ़ता है।

अभिरक्त विस्थापन गैलेक्सी की प्रेक्षक से दूरी के अनुपात में बढ़ता-घटता है। इसे 'हबल का नियम' कहते हैं, जो चित्र क्र० 7 में दिखाया गया है।

यह अभिरक्त विस्थापन क्यों दिखाई देता है ? इसका एक सीधा उत्तर डाप्लर-प्रभाव पर निर्भर है। इस प्रभाव के अनुसार यदि प्रकाश-स्रोत (G) प्रेक्षक (O) से दूर जा रहा हो, तो O को G के स्पेक्ट्रम में अभिरक्त विस्थापन दिखाई देगा। यदि O से G दूर भाग रहा हो, जैसा चित्र क्र० 6 में दिखाया गया है, तो उसके दूर जाने के वेग V और शून्य में प्रकाश के वेग C का अनुपात G के अभिरक्त विस्थापन के बराबर होगा। उपर्युक्त

और G एक गैलेक्सी है । G से O की ओर आनेवाले प्रकाश में पाई जानेवाली अवशोषण-रेखाएं भूस्थित प्रयोगशाला की अपेक्षा अधिक तरंग दैर्घ्यवाली दिखाई देती हैं । उदाहरण के तौर पर, पार्थिव कैलशियम की H रेखा का तरंग दैर्घ्य 3968.5 A° होना चाहिए (1 A° = 1 ऐंग्स्ट्रम = मिलीमीटर का करोड़वां हिस्सा) । यदि प्रेक्षण में वह 4762.2 A° पाया गया, तो खगोलज्ञ इसे 'अभिरक्त विस्थापित' कहेगा । चूंकि स्पेक्ट्रम में लाल रंग सर्वाधिक तरंग दैर्घ्य पर पाया जाता है, इसलिए उपर्युक्त उदाहरण में अवशोषण-रेखा लाल रंग की ओर सरकी हुई मालूम पड़ती है । यह विस्थापन कितना है ? प्रेक्षण में पाए गए तरंग दैर्घ्य के विस्थापन (793.7 A°) को अपेक्षित तरंग दैर्घ्य से भाग दीजिए । इसे 'अभिरक्त विस्थापन' कहते हैं । हमारे उदाहरण में उत्तर आएगा 0.2; इसका अर्थ है कि अभिरक्त विस्थापन 0.2 है ।

हबल-ह्यूमासन की जोड़ी ने देखा कि किसी गैलेक्सी के स्पेक्ट्रम की सभी रेखाएं एक ही अभिरक्त विस्थापन वाली दीखती है, जिसे उस गैलेक्सी का अभिरक्त विस्थापन कहते हैं । चित्र क्र० 6 में दिखाई गई गैलेक्सी का अभिरक्त विस्थापन 0.2 ।इसके अलावा हबल ने यह भी निष्कर्ष निकाला कि यह

अभिरक्त स्थापन
O G V

चित्र 6. निरीक्षक O से दूर जानेवाली गैलेक्सी G से आनेवाले प्रकाश मे अभिरक्त-स्थापन दिखाई देता है । इसका कारण डॉप्लर प्रभाव हो सकता है ।

चित्र 7. हबल का नियम—गैलेक्सियों का हमसे दूर जाने का वेग उनकी दूरी के अनुपात में बढ़ता है।

अभिरक्त विस्थापन गैलेक्सी की प्रेक्षक से दूरी के अनुपात में बढ़ता-घटता है। इसे 'हबल का नियम' कहते हैं, जो चित्र क्र० 7 में दिखाया गया है।

यह अभिरक्त विस्थापन क्यों दिखाई देता है ? इसका एक सीधा उत्तर डाप्लर-प्रभाव पर निर्भर है। इस प्रभाव के अनुसार यदि प्रकाश-स्रोत (G) प्रेक्षक (O) से दूर जा रहा हो, तो O को G के स्पेक्ट्रम में अभिरक्त विस्थापन दिखाई देगा। यदि O से G दूर भाग रहा हो, जैसा चित्र क्र० 6 में दिखाया गया है, तो उसके दूर जाने के वेग V और शून्य में प्रकाश के वेग C का अनुपात G के अभिरक्त विस्थापन के बराबर होगा। उपर्युक्त

उदाहरण में G का यह वेग प्रकाश के वेग का पंचमांश है।*

अब हम डॉप्लर प्रभाव को हबल के नियम के साथ जोड़कर देखेंगे। नतीजा यह निकलता है कि हमारे आसपास की अधिकतर गैलेक्सिया हमसे दूर भाग रही हैं और दूर भागने का वेग गैलेक्सी की यहां से दूरी के अनुपात में बढता है। 1929 में हबल ने गैलेक्सियों की दूरियां जिस पद्धति से तय की थीं, उसमें काफी त्रुटियां थीं। आजकल के खगोलज्ञ उन त्रुटियों को दूर करने में बहुतांश रूप में सफल हुए है। हबल का नियम आजकल की भाषा में इस प्रकार लिखा जा सकता है :

दूर भागने की गति=H × गैलेक्सी की दूरी

H को हबल का स्थिरांक कहते हैं।

यदि गैलेक्सी की दूरी एक करोड़ प्रकाशवर्ष हो, तो दूर भागने की यह गति प्रति सेकंड 150 से 300 किलोमीटर के दरम्यान होगी। हबल के स्थिरांक के बारे में आज खगोलज्ञों में मतभेद है; कुछ लोग उपर्युक्त उदाहरण में 150 को सही मानेंगे, तो कुछ लोग 300 को।

---

* यह नियम न्यूटन के गति तथा काल-अवकाश के नियमों पर निर्भर है। यदि हम विशिष्ट सापेक्षवाद का सिद्धान्त अपनाएं, तो अभिरक्त विस्थापन का सूत्र इस प्रकार है—

$$1+Z=\sqrt{\frac{1+V/C}{1-V/C}}$$

Z =अभिरक्त विस्थापन,
C =शून्य में प्रकाश का वेग

भरधान (का [illegible])
सी-50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

लेकिन इस खोज का अर्थ क्या है ? प्रथम दृष्टि में हम इस नतीजे पर पहुंचते है कि हमारी आकाश गंगा किसी विस्फोट का केन्द्र बनी है और सभी अन्य गैलेक्सियां हमसे दूर पलायन कर रही हैं । इसका मतलब यह तो नहीं कि ब्रह्मांड में हमारी आकाश गंगा को विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है ? यदि हां, तो यह निष्कर्ष कॉपनिकस द्वारा प्रस्थापित परम्परा के विपरीत जाएगा ।

लेकिन वास्तविक स्थिति ऐसी नहीं है । यदि हम हबल के नियम पर अधिक गहराई से विचार करें, तो हमें मालूम होगा कि ब्रह्मांड में हमारी आकाशगंगा को कोई विशेष स्थान प्राप्त नहीं है । बल्कि यदि हम ब्रह्मांड का प्रेक्षण अन्य किसी गैलेक्सी से करें, तो भी हमें ठीक वही हबल का नियम प्राप्त होगा, जो हमारी आकाशगंगा से मिलता है । वास्तविक स्थिति का अनुमान एक फूलते गुब्बारे की ब्रह्मांड से तुलना करके लगाया जा सकता है । यदि गुब्बारे पर हम छोटे-छोटे बिन्दु अंकित करें, तो जैसे-जैसे गुब्बारा फुलाया जाएगा, वैसे-वैसे ये बिन्दु एक-दूसरे से दूर होते जाएंगे । लेकिन हम किसी एक बिन्दु को केन्द्र नहीं मान सकते । सभी बिन्दुओं को समान रूप से महत्त्व प्राप्त है ।

इस तुलना के आधार पर हम कह सकते हैं कि सम्पूर्ण ब्रह्मांड प्रसरणशील है । ब्रह्मांड में स्थित गैलेक्सियां एक-दूसरे से दूर भाग रही हैं, क्योंकि उनके बीच का अन्तराल फैल रहा है। 1929 के हबल के प्रेक्षणों से इस प्रकार प्रसारी-ब्रह्मांड की धारणा का उदय हुआ ।

इसके पहले कि हम इस धारणा पर आधारित प्रतिरूपों पर विचार करें, ब्रह्मांडिकीय सिद्धांत का जिक्र करना आवश्यक होगा । इस सिद्धांत के अनुसार ब्रह्मांड में न तो कोई खास स्थान है और न कोई खास दिशा । सभी स्थानों से और सभी दिशाओं में

ब्रह्मांड का दृश्य एक-सा दीखेगा। हबल के नियम के संदर्भ में हमने इस सिद्धान्त का नमूना देखा था।

ब्रह्मांड में बड़े पैमाने पर यह सिद्धांत लागू है, ऐसा माना जाता है। जहां तक हमने अंतरिक्ष का प्रेक्षण किया है, वहां तक यह सिद्धांत कामयाब सिद्ध हुआ है। चूंकि इस सिद्धांत के अनुरूप ब्रह्मांड की रचना व्यवस्थित है, इसलिए इसके आधार पर रचे प्रतिरूप सरल होते है। अब हम इन प्रतिरूपों का संक्षिप्त इतिहास देखेंगे।

ब्रह्मांडिकीय प्रतिरूप

आधुनिक काल में ब्रह्मांडिकीय प्रतिरूप बनाने का प्रथम प्रयास किया अल्बर्ट आइंस्टाइन ने। 1915 में आइंस्टाइन ने व्यापक सापेक्षता का सिद्धांत प्रस्तुत किया। आइज़क न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण तथा गति के सिद्धांतों का आइंस्टाइन के 1905 के विशिष्ट सापेक्षता के सिद्धांत के साथ समन्वय करने से यह सिद्धांत तैयार हुआ था। अवकाश और काल की ज्यामिति का संबंध उनमें निहित संहति और ऊर्जा से है, ऐसा प्रतिपादन आइंस्टाइन ने किया। यूक्लिड की ज्यामिति के अलावा अन्य ज्यामितियां भी होती हैं, यह बात गणितज्ञ जानते थे, लेकिन उनका वास्तविक ब्रह्मांड से संबंध जोड़ने का कार्य आइंस्टाइन ने किया।

अयूक्लिडी ज्यामितियों तथा व्यापक सापेक्षता के महत्त्वपूर्ण नतीजों पर मैं समय के अभाव के कारण नहीं बोल सकूंगा। यहां मैं उनका जिक्र केवल ब्रह्मांडिकी के सिलसिले में करूंगा, क्योंकि इन धारणाओं के आधार पर आइंस्टाइन ने अपना ब्रह्मांड प्रतिरूप 1917 में प्रस्तुत किया।

आइंस्टाइन के प्रतिरूप में ब्रह्मांडिकीय सिद्धांत अपनाया

: सी-50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

गया था, साथ ही आइंस्टाइन ने ऐसा भी मान लिया था कि ब्रह्मांड स्थैतिक है। 1917 में प्रसारी ब्रह्मांड की धारणा से वैज्ञानिक परिचित नहीं थे, इसलिए यदि स्थैतिक ब्रह्मांड की धारणा आइंस्टाइन को स्वाभाविक रूप में जंची हो, तो आश्चर्य नहीं।

लेकिन आइंस्टाइन को यह ज्ञात था कि गुरुत्वाकर्षण के कारण ब्रह्मांड स्थिर नही रह सकता, अतः ब्रह्मांड का संकुचन रोकने के लिए उन्होंने एक नए बल की कल्पना की जिसके अनुसार कोई दो कण अपने बीच की दूरी के अनुपात में एक-दूसरे को दूर ढकेलते हैं। इस बल को λ-बल कहते हैं। इस बल के स्थिरांक λ के *अत्यल्प* होने के कारण इसका प्रभाव सौर-मंडल के स्तर पर नहीं दिखाई देता, लेकिन ब्रह्मांड के स्तर पर यह बल महत्वपूर्ण होगा।

1922-24 की अवधि में रूस के वैज्ञानिक फ्रीडमन ने λ-बल के बिना ब्रह्मांड के प्रतिरूप बनाए। ये स्थैतिक ब्रह्मांड के न होकर प्रसारी ब्रह्मांड के थे। उस समय आइंस्टाइन तथा अन्य वैज्ञानिकों ने इन प्रतिरूपों की उपेक्षा की, लेकिन 1929 की हबल की खोज के पश्चात् लोगों को धीरे-धीरे इस बात का आभास होने लगा कि ये प्रतिरूप ही अधिक उपयुक्त हैं, ब्रह्मांड स्थैतिक नहीं, बल्कि गतिशील है, यह जानकर स्वयं आइंस्टाइन ने अपने स्थैतिक ब्रह्मांड के प्रतिरूप *को गलत मान लिया तथा* λ-*बल को अपने* समीकरण से निकाल दिया।

अब हम फ्रीडमन के प्रतिरूपों को अधिक ध्यान से देखेंगे। फ्रीडमन के प्रतिरूपों को समझने के लिए हम फिर गुब्बारे का उदाहरण सामने रखेंगे। मान लीजिए कि गुब्बारे को फुलाकर उसका व्यास पहले से दुगुना कर दिया गया। ऐसी हालत में उस पर अंकित बिंदुओं की आपसी दूरी पहले से दुगुनी हो जाएगी। उसी प्रकार ब्रह्मांड की फैलावट दिखाने के लिए हम दो गैले-

चित्र 8. प्रसारी ब्रह्मांड में दो गैलेक्सियों के बीच की दूरी किस प्रकार समयानुसार बढ़ती जाती है, यह प्रदर्शित करनेवाले फ्रीडमन के प्रतिरूप k=O, 1 और —1 के लिए; ये तीन प्रतिरूप क्रमशः प्रकार I, II और III को प्रदर्शित करते हैं।
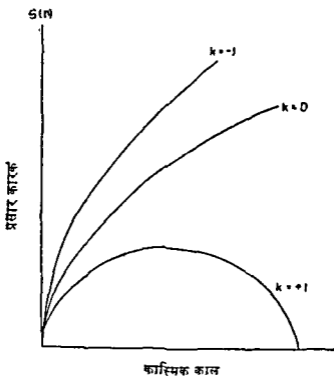
क्सियों के बीच की दूरी को पैमाने-सदृश रख सकते हैं। जैसे-जैसे ब्रह्मांड फैलता जाता है, वैसे-वैसे यह दूरी बढती जाती है और जिस अनुपात में यह बढ़ेगी, उसी अनुपात में अन्य किन्हीं भी दो गैलेक्सियों के बीच की दूरी बढ़ेगी।

चित्र क्रमांक 8 में दूरी को S से दिखाया गया है और काल को k से। फ्रीडमन ने आइंस्टाइन के व्यापक सापेक्षता के समीकरणों को हल करके यह मालूम किया कि S किस प्रकार कालानुसार बदलता है। तीन प्रकार के प्रतिरूप फ्रीडमन के गणित से प्राप्त होते है, जिनका चित्र में वर्णन किया गया है।

संक्षेप में, इन प्रतिरूपों के विभिन्न प्रकार अवकाश की ज्यामिति पर निर्भर करते हैं। ये तीन प्रकार की ज्यामितियां अवकाश की शून्य, धनात्मक, अथवा ऋणात्मक वक्रता के अनुसार हैं। द्विविम वाले अवकाश का उदाहरण समतल से दिया जा सकता है, जिसकी वक्रता शून्य है और जिस पर यूक्लिड की ज्यामिति लागू होती है। इसके अलावा गोले के पृष्ठ भाग की भी विमाएं दो हैं, लेकिन उसकी वक्रता धनात्मक है। ऋणात्मक वक्रता वाला द्विविम पृष्ठ भाग हमें घोड़े की पीठ पर रखी जाने वाली जीन में मिलता है। धनात्मक और ऋणात्मक अवकाशों में अयूक्लिडी ज्यामितियां लागू होती हैं। चित्र क्रमांक 9 में इन तीन प्रकारों को I, II, III से दिखाया गया है।

प्रकार I में S शून्य से बढ़ता हुआ अनंत तक चला जाता है। प्रकार II में S शून्य से बढ़ता है, लेकिन अपने अधिकतम मान तक पहुंचने के बाद घटने लगता है और अंत में शून्य हो जाता है। प्रकार III में S शून्य से अनंत तक बढ़ता है, लेकिन बढ़ने का वेग प्रकार I से कहीं अधिक है। प्रकार I और III खुले ब्रह्मांड के उदाहरण हैं, जबकि प्रकार II सीमित या बंद ब्रह्मांड का। प्रकाश-किरण किसी दिशा में भेजी जाए, तो वह प्रकार I या III में वापस नहीं आएगी, जबकि प्रकार II में वह ब्रह्मांड का चक्कर लगाकर लौट आएगी। प्रकार II के ब्रह्मांड में संपूर्ण अवकाश का आयतन परिमित है।
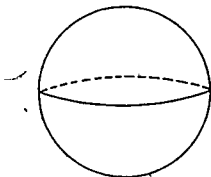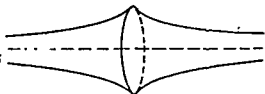
चित्र 9. धनात्मक, ऋणात्मक तथा शून्य वक्रता के द्विविम पृष्ठभागों के उदाहरण। वक्रता को यहां k से निर्दिष्ट किया गया है।

फ्रीडमन-प्रतिरूपों के समीकरण हल करने पर हमें दो महत्वपूर्ण बातें मालूम होती हैं। पहली बात है प्रतिरूपों के प्रकार का ब्रह्मांड के घनत्व से संबंध। प्रकार I के प्रतिरूप में ब्रह्मांड का औसत घनत्व

$$\rho_C = \frac{3H^2}{8\pi G}$$

होता है। यहां H हबल का स्थिरांक है और G न्यूटन का

गुरुत्वाकर्षण स्थिरांक है। इस घनत्व का मूल्य लगभग 10^{-26} ग्राम प्रति लिटर है। यदि ब्रह्मांड का घनत्व इससे अधिक हो, तो ब्रह्मांड प्रकार II का होगा और यदि कम हो, तो वह प्रकार III का होगा। इस बारे में वास्तविक स्थिति क्या है, इसका जिक्र हम आगे करेंगे।

दूसरा महत्वपूर्ण निष्कर्ष है ब्रह्मांड की उत्पत्ति के बारे में। चित्र क्र० 8 में हम देखते हैं कि ब्रह्मांड का आकार अतीत में आज से छोटा था और भविष्य में आज से अधिक होगा। तीनों प्रति-रूपों में अंतर इस बात में है कि ब्रह्मांड का आकार भविष्य में क्या होगा, लेकिन जहां तक अतीत का सवाल है तीनों ही प्रति-रूपों के अनुसार एक क्षण ऐसा था, जब S का मान शून्य था। यह क्षण ब्रह्मांड की उत्पत्ति का क्षण माना जाता है। चित्र क्र० 8 में इसे $k=0$ से प्रदर्शित किया गया है।

महाविस्फोट

इस उत्पत्ति के क्षण में संपूर्ण ब्रह्मांड अस्तित्व में आया और वह भी एक प्रचंड विस्फोट के रूप में आजकल जो गैलेक्सियां एक-दूसरे से दूर भागती दिखाई देती हैं, उसका कारण यही विस्फोट माना जाता है। विस्फोट के बाद ब्रह्मांड का ताप बहुत ही ऊंचा था, अब वह धीरे-धीरे कम होता जा रहा है।

1950 के आसपास जॉर्ज गैमो नामक वैज्ञानिक ने ब्रह्मांड की इस प्रारंभिक दशा का अध्ययन करके यह नतीजा निकाला कि शुरू के दो-तीन मिनटों में, अरबों डिग्री के ताप में, मूल कणों के संलयन से रासायनिक मूलतत्वों के नाभिक बने होंगे। पिछले व्याख्यान में हमने देखा कि तारों के अतितप्त अंतरंग में नाभि-कीय अभिक्रियाओं से अपेक्षाकृत भारी नाभिक बनते हैं। कुछ ऐसी ही परिस्थिति संपूर्ण ब्रह्मांड में प्रारंभिक 2-3 मिनटों में

मौजूद थी। गैमो तथा उसके सहयोगियों आल्फ़र और हरमन ने तत्कालीन नाभिकीय भौतिकी के आधार पर अपने सिद्धांत को पेश किया था।

आजकल की परिष्कृत भौतिकी से मालूम होता है कि ब्रह्मांड में यह अभिक्रिया केवल हल्के नाभिक बनाने में सफल हुई होगी। ड्यूटीरियम, हीलियम जैसे नाभिक पर्याप्त संख्या में बनाने में तारे सफल नहीं होते, लेकिन अतितप्त ब्रह्मांड इन्हें पर्याप्त संख्या में बनाने में सफलहुआ होगा। परंतु कार्बन, नाइट्रोजन और उनसे भी भारी नाभिक ब्रह्मांड-निर्मिति के बाद दो-तीन मिनटों में नहीं बने, उनके निर्माण के अनुकूल परिस्थिति तब मौजूद नहीं थी। अतः गैमो की भविष्यवाणी पूर्णतया सही नहीं सिद्ध हुई।

फिर भी गैमो और उनके सहयोगियों की एक प्रागुक्ति सही थी, ऐसा मालूम पड़ता है। उन्होंने यह अंदाज लगाया था कि पहले दो-तीन मिनटों में जो प्रकाश-विकिरण मौजूद था, वह अब ठंडे स्वरूप में ब्रह्माड में बिखरा होना चाहिए और उसका स्वरूप कृष्णिका विकिरण का होना चाहिए।

1965 में आर्नोपेनज़ियास और रॉबर्ट विलसन ने किसी अन्य प्रयोग के सिलसिले में देखा कि ब्रह्मांड में सूक्ष्म तरंगों का विकिरण सर्वत्र मौजूद है (इस खोज के लिए उन्हें नोबेल पुरस्कार मिला)। अन्य खगोलज्ञों ने भी यह विकिरण विभिन्न तरंग दैर्घ्यों पर देखा और इस बात की पुष्टि की कि इस विकिरण का स्पेक्ट्रम कृष्णिका विकिरण-जैसा है। इस विकिरण का स्पेक्ट्रम चित्र क्रमांक 10 में देखिए।

यह चित्र आज तक के प्रेक्षणों पर आधारित है। यद्यपि प्रेक्षणों द्वारा मिली जानकारी कृष्णिका विकिरण के स्पेक्ट्रम से काफी मिलती-जुलती है, फिर भी दोनों में जो सूक्ष्म अंतर हैं, उनकी कारण-मीमांसा करना आवश्यक है। मैं इस बात की चर्चा
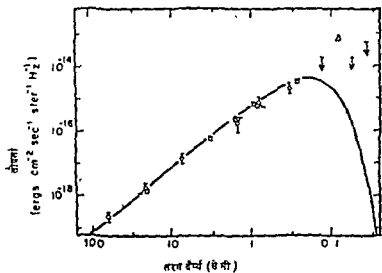
चित्र 10. ब्रह्मांड में सर्वत्र फैले सूक्ष्म तरंगों के विकिरण का स्पेक्ट्रम। छायांकित भाग प्रत्यक्ष प्रेक्षणों की सीमाएं दिखाता है तथा उनसे सर्वाधिक मेल खाने वाली कृष्णिका विकिरण की रेखा भी प्रदर्शित की गई है।

आगे फिर करूंगा। अभी हम इतना मान लेंगे कि उक्त विकिरण का ताप 3 डिग्री परम याने –270 डिग्री सेंटीग्रेड है।

पार्श्वभूमि में निहित सूक्ष्म तरंगों की इस खोज ने महा-विस्फोट-जनित ब्रह्मांड की परिकल्पना की पुष्टि में बड़ा योग दिया है। अधिकतर खगोलज्ञ अब इस परिकल्पना पर विश्वास करने लगे हैं। इतना ही नहीं, जिस प्रकार तीन दशक पहले गैमो ने गरम ब्रह्मांड में रासायनिक मूलतत्व बनाने की परिकल्पना सामने रखी थी, उसी प्रकार आज के भौतिक विज्ञानी इस प्रयत्न

में लगे हैं कि वे इस प्रश्न का भी उत्तर हासिल कर लें कि मूल कण कैसे बने। गैमो ने ब्रह्मांड की उत्पत्ति के बाद एक सेकिंड से तीन मिनट तक का इतिहास हमारे सामने रखा था। मूल कण बनाने के लिए हमें उससे भी पीछे जाना पड़ेगा। महा-विस्फोट के बाद एक सेकिंड का अरब-अरब-अरब-अरबवां हिस्सा जब व्यतीत हुआ, तब मूल कणों का बनना प्रारंभ हुआ, ऐसा कुछ लोगों का तर्क है। इस अत्यल्प कालावधि के पश्चात् भौतिकी की विभिन्न मूलभूत क्रियाओं का पृथक्करण प्रारंभ हुआ। आजकल इस विषय की काफी चर्चा है, लेकिन समया-भाव के कारण हमें अब दूसरी दिशा में जाना आवश्यक है।

प्रेक्षणों द्वारा प्रतिरूपों की जांच-पड़ताल

विज्ञान इस बात पर गर्व करता है कि उसके सिद्धांतों की जांच-पड़ताल प्रयोगों द्वारा की जा सकती है। यदि कोई वैज्ञा-निक सिद्धांत इस परीक्षा में अनुत्तीर्ण होता है, तो उसे त्याज्य माना जाता है। बड़े-बड़े प्रस्थापित सिद्धांत किसी न किसी मौके पर इस तकाजे के शिकार हो चुके हैं। इस संदर्भ में हम रसायन का फ्लाजिस्टन सिद्धांत, भौतिकी का ईथर सिद्धांत, इत्यादि कुछ उदाहरण दे सकते हैं। इतना ही नहीं, न्यूटन के सिद्धांतों को धक्का पहुंचाने का काम इसी तकाजे ने किया। चूंकि ब्रह्मांडिकी विज्ञान का एक अंग है, इसलिए उसे भी इस तकाजे का पालन करना पड़ेगा। अब हम देखेंगे कि फ्रीडमन के प्रतिरूपों की जांच-पड़ताल किस प्रकार की जा सकती है।

(1) ब्रह्मांड की आयु—उत्पत्ति के क्षण से आज तक जो काल व्यतीत हुआ है, उसे हम ब्रह्मांड की आयु मान सकते हैं। जैसा कि हमने देखा, फ्रीडमन का प्रतिरूप एक नहीं, अनेक हैं, और विभिन्न प्रतिरूपों के अनुसार ब्रह्मांड की आयु भिन्न है।

चित्र क्रमांक 11 में यह दिखाया गया है कि ब्रह्मांड की आयु विभिन्न प्रतिरूपों के लिए किस प्रकार भिन्न होती है।

सुविधा के लिए आयु को वर्षों में व्यक्त न करके हबल स्थिरांक के पैमाने पर व्यक्त किया गया है। पहले हमने इस स्थिरांक H का आज के युग में मान क्या हो सकता है, इसकी चर्चा की थी। 1/H का मूल्य दस से बीस अरब वर्ष के बीच है। इस पैमाने पर चित्र क्र० 11 में ब्रह्मांड की आयु व्यक्त की गई है। यहां हम देखते हैं कि प्रकार I के प्रतिरूप वाले ब्रह्मांड की आयु दो-तिहाई है। इसका अर्थ यही है कि यदि 1/H का मान पंद्रह
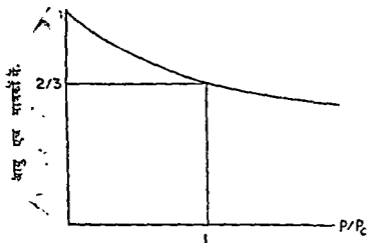
चित्र 11. ब्रह्मांड की आयु फ्रीडमन के प्रतिरूपों के अनुसार 1/H के पैमाने पर उदग्र अक्ष पर दिखाई गई है। क्षैतिज अक्ष पर प्रतिरूप का औसत घनत्व ρC के पैमाने पर व्यक्त किया गया है। ρC=1 यांने प्रकार 1 के प्रतिरूप में ब्रह्मांड की आयु 2/3 H है।

अरब वर्ष हो, तो प्रकार I के ब्रह्मांड की आयु दस अरब वर्ष है। प्रकार III के प्रतिरूपों की आयु इससे अधिक (लेकिन अधिक से अधिक 1/H है), जबकि प्रकार II के प्रतिरूपों की आयु 2/3 H से कम है।

अब हम इस आयु की तुलना ब्रह्मांड के कुछ पिंडों की आयु से करेंगे। उदाहरणार्थ, पृथ्वी की आयु भूविज्ञानियों ने लगभग 4.6 अरब वर्ष निश्चित की है। सूर्य की आयु इससे कुछ अधिक—लगभग 6 अरब वर्ष है। लेकिन सूर्य से अधिक आयु वाले तारे भी हमारी आकाशगंगा में हैं। उनकी रचना को देखकर तथा कुछ रेडियोऐक्टिव तत्वों के अनुपात को देखकर खगोलज्ञों का अंदाज है कि आकाशगंगा की आयु दस से पंद्रह अरब वर्ष के मध्य होगी।

यह तो स्पष्ट है कि ब्रह्मांड की आयु उसके किसी भी अंग की आयु से अधिक ही होनी चाहिए, कम नहीं। इसलिए हबल स्थिरांक H का मान इतना होना चाहिए कि 1/H बीस अरब वर्षों के आस-पास हो। यदि 1/H का मान केवल दस अरब वर्षों के आस-पास हुआ, तो फ्रीडमन के प्रतिरूपों पर आफत आ जाएगी। अभी खगोलज्ञ यह निश्चित नहीं कर पाए हैं कि H (और 1/H) का मान वास्तव में है कितना। यह जानने के बाद ही हम इस जांच-पड़ताल का सही नतीजा बता सकेंगे।

(2) **सूक्ष्म तरंगों का विकिरण**—इसका विवरण हम पहले दे चुके हैं। अधिकतर खगोलज्ञ इसकी व्याख्या अति तप्त ब्रह्मांड के अवशिष्ट विकिरण के रूप में करते हैं।

लेकिन इस व्याख्यानुसार इस विकिरण का स्पेक्ट्रम प्लांक द्वारा सिद्ध किए गए कृष्णिका विकिरण जैसा होना आवश्यक है। कैलिफ़ोर्निया के वुडी और रिचर्ड्स का कहना है कि वास्तविक स्पेक्ट्रम तथा कृष्णिका विकिरण के स्पेक्ट्रम में कुछ फ़र्क है,

जिनका अस्तित्व महाविस्फोटजनित ब्रह्मांड की परिकल्पना के लिए चिंताजनक है। आगे होने वाले प्रयोगों द्वारा यह निश्चित किया जाएगा कि वास्तव में ये फर्क उपस्थित है या नहीं।

फिर भी यह वताना आवश्यक है कि कतिपय वैज्ञानिकों ने इस विकिरण का उद्‌गम अन्य विधियों से किस प्रकार हुआ होगा, इसकी भी चर्चा की है। अवशिष्ट विकिरण के सिद्धांत में कुछ और भी कठिनाइयां हैं, जिनके कारण उसके वारे में संदेह उत्पन्न हो जाता है। उदाहरण के लिए, इस विकिरण में इतनी समदैशिकता है कि उस पर ब्रह्मांड की महत्वपूर्ण घटनाओं की कोई छाप नहीं मिलती।

एक ऐसी ही घटना गैलेक्सियों की उत्पत्ति के वारे में है। गैलेक्सियां कैसे वनीं? जिस प्रकार गैस के आकुंचन और खंडन से तारे वने, क्या उसी प्रकार अति विशाल आद्य गैसमेघ से गैलेक्सियां वनीं? यदि ऐसी घटना सचमुच हुई, तो उसके कुछ अवशेष आद्य विकिरण में दिखाई देने चाहिए। चूंकि ऐसे अवशेष नहीं मिलते, इसलिए उपर्युक्त वैज्ञानिकों का कहना है कि यह विकिरण भी वहुत वाद में, हाल ही में वना होगा। इस विषय पर भी अंतिम निर्णय अगले कुछ वर्षों में होने की संभावना है। महाविस्फोट के सिद्धांत का भविष्य इस निर्णय पर निर्भर है।

(3) **ब्रह्मांड का घनत्व**—जैसा कि हम पहले देख चुके हैं, इसका निर्णय कि ब्रह्मांड सीमित है या अनंत, उसके औसत घनत्व का मापन करके हो सकता है। कई वर्षों से किए जा रहे प्रेक्षणों के आधार पर यह नतीजा निकलता है कि दृश्य पदार्थों का औसत घनत्व प्रकार I के प्रतिरूप की अपेक्षा वहुत कम है। अत: यदि औसत घनत्व केवल दृश्य पदार्थों पर ही निर्भर करे, तो ब्रह्मांड अनंत है। लेकिन फ्रीडमन के प्रकार II के प्रतिरूप के

समर्थक अभी हताश नही हुए है। उनका कहना है कि ब्रह्मांड में अभी अदृश्य रूप में काफी पदार्थ है, जिसका अंदाज अभी तक लगाना सभव नहीं है। पिछले व्याख्यान में हमने देखा कि कृष्ण विवर देखे नहीं जाते, लेकिन उनका अस्तित्व उनके गुरुत्वाकर्षण से प्रकट हो सकता है।

गैलेक्सियो के प्रेक्षण से और उनके समूहों का अध्ययन करने से मालूम पड़ता है कि प्रकाशहीन पदार्थ ब्रह्मांड में मौजूद हैं। यह आवश्यक नहीं कि ये पदार्थ कृष्ण विवरों के रूप में ही हों। यदि न्यूट्रीनो नाम के कणों में संहति हो, तो वे गैलेक्सियों के गुरुत्वाकर्षण से आकृष्ट होकर काले बादल के रूप में उनके चारों ओर उपस्थित रहेगे। मूल प्रक्रमों के एकीकृत सिद्धांत के अनुसार ब्रह्माड में भारी सहति के एक-ध्रुव भी मौजूद होने चाहिए। इसके अतिरिक्त ऐसे तारे जिनका नाभिकीय ईंधन समाप्त हो गया है और चमक-दमक जाती रही है, वे भी पर्याप्त मात्रा में अदृश्य घनत्व को बढ़ा सकते हैं।

सारांश में, अभी यह कहना मुनासिब नही कि ब्रह्मांड सीमित है या अनंत।

(4) दूरगामी प्रेक्षण—ब्रह्मांड पुरातन काल में कैसा था, इसकी जानकारी प्राप्त करने का एक और मार्ग खगोलज्ञों को उपलब्ध है। वह मार्ग है दूरगामी प्रेक्षणों का।

कल्पना कीजिए कि आप अपनी दूरबीन पर अति उत्तम इलेक्ट्रॉनिक उपायो से एक धूसर चित्र पाते है, जो एक ऐसी गैलेक्सी का है जिसकी दूरी हमसे पांच अरब प्रकाश वर्ष है। इस चित्र को अंकित करने वाली प्रकाश-किरणें उस गैलेक्सी से कब निकली ? आज से पांच अरब वर्ष पहले। अतः यदि हम ब्रह्माड को किसी दिशा में दूर तक देखें, तो हमें उस भाग के पुरातन स्वरूप का पता चलता है।

हवल के नियमानुसार दूरी के साथ अभिरक्त विस्थापन बढ़ता है। आज तक ऐसी अति दूर गैलेक्सियां मिली हैं, जिनका अभिरक्त विस्थापन 1 के आसपास है। इसका अर्थ यह है कि वहां से चले प्रकाश का तरंग दैर्घ्य यहां तक आकर दुगुना हो जाता है। गैलेक्सियों के अलावा 'क्वेसार' नाम के तारासदृश, लेकिन अति ज्योतिर्मय पिंड, जिनकी खोज 1963 में हुई, काफी अधिक अभिरक्त विस्थापन दिखाते हैं। सर्वाधिक अभिरक्त विस्थापन वाला क्वेसार PKS=2000-330 है, जिसका अभिरक्त विस्थापन 3.78 है। लेकिन कुछ खगोलज्ञों को संदेह है कि क्वेसार का अभिरक्त विस्थापन हवल के नियमानुसार है या नहीं।

क्या पुरातन काल में ब्रह्मांड का घनत्व आज से अधिक था? क्या उसके फैलने की गति (याने हवल स्थिरांक का मूल्य) आज से अधिक थी? क्या गैलेक्सियों के स्वरूप में, चमक-दमक में, कालानुसार फर्क हो रहे हैं? ऐसे अनेक प्रश्न हैं, जिनको हल करने के लिए विश्व की सर्वोत्तम दूरबीनें दृश्य प्रकाश रेडियो तरंगों का उपयोग करते हुए रात-दिन प्रयत्नशील हैं।

इन प्रयोगों में भविष्य में अंतरिक्ष दूरबीन भी सहयोग देगी। यह दूरबीन फोटो क्रमांक 7 में दिखाई गई है। यह दूरबीन 1985 में काम करना शुरू करेगी। समझा जाता है कि पृथ्वी-तल पर स्थित सर्वोत्तम दूरबीनों से यह दूरबीन अधिक कार्यक्षम होगी—धुंधली वस्तुएं देखने में 50 गुनी और छोटी वस्तुएं देखने में दस गुनी। इस दूरबीन से मिलने वाले दूरगामी प्रेक्षणों पर ब्रह्मांडिकी के भविष्य की दिशा निर्भर करेगी।

क्या ब्रह्मांड अनादि है ?

यद्यपि अधिकतर ब्रह्मांडिकीविद् आजकल फ्रीडमन के प्रतिरूपों को पसंद करते है, फिर भी यह कहना अनुचित होगा कि ब्रह्मांडिकी के प्रमुख प्रश्न अब हल हो चुके हैं।

यदि ब्रह्मांड की उत्पत्ति महाविस्फोट से हुई, तो यह विस्फोट क्यों हुआ ? किस विधि से पदार्थों का सृजन हुआ ? इस अवसर पर ऊर्जा और पदार्थों की सामूहिक अक्षय्यता का सिद्धांत भंग हुआ । लेकिन क्यों ? इसके पहले क्या मौजूद था ?

इन प्रश्नों का उत्तर महाविस्फोट का सिद्धांत नहीं दे पाया है। इसके अलावा और भी कई समस्याएं इस सिद्धांत में निहित हैं, जिनका स्वरूप तकनीकी होने के कारण मैं उनकी चर्चा यहां नहीं कर सकूंगा ।

यहां कुछ अन्य सिद्धांतों का संक्षेप में जिक्र करना उचित होगा, जो ब्रह्मांडिकी के बारे में क्रांतिकारी विचार प्रस्तुत करते है । 1948 मे इग्लेंड के तीन वैज्ञानिकों—हॉयल, बॉण्डी, और गोल्ड—ने स्थायी अवस्था के ब्रह्मांड का प्रतिपादन किया था । इस प्रतिरूप के अनुसार ब्रह्मांड का न तो महाविस्फोट के साथ प्रारंभ हुआ और न उसका कभी अंत होगा; यह सदैव वैसा-का-वैसा बना रहेगा । यद्यपि इसमें भी प्रसरणशीलता समाहित है, फिर भी इसका घनत्व सदैव स्थिर रखने के लिए इसमें सतत सृजन चालू रहता है । जहां महाविस्फोट के सिद्धान्त में सारे पदार्थ का एकाएक सृजन हुआ, वहां स्थायी अवस्था के सिद्धांत में पदार्थ का सृजन हर वक्त चालू रहता है । यदि यह सिद्ध हुआ कि सूक्ष्म तरंगों का विकिरण आदिकाल के गरम ब्रह्मांड के अवशेष के रूप में है, तो स्थायी अवस्था का सिद्धांत असफल माना जाएगा, किन्तु यदि यह सिद्ध हुआ कि उपर्युक्त विकिरण निकट भूतकाल में ही उत्पन्न हुआ है, तो इस सिद्धांत में नई जान आ जाएगी ।

इसके अतिरिक्त कई सिद्धांत ऐसे है, जिनका निष्कर्ष यह है कि गुरुत्वाकर्षण की शक्ति धीरे-धीरे क्षीण हो रही है। इस प्रकार के सिद्धांत डिरैक, ब्रांस और डिकी तथा हॉयल और मैंने प्रस्तुत किए हैं । न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के स्थिरांक के मान में

समयानुसार कुछ फ़र्क होता है या नहीं, इस पर इन सिद्धांतों का भविष्य निर्भर है। इन सिद्धांतों के अनुसार अपेक्षित गिरावट है एक खरब के कुछ भाग प्रतिवर्ष—बहुत ही कम ! लेकिन आधुनिक तकनीकी, जिसमें चंद्रमा तक की लेज़र, अणु घड़ियों, इत्यादि का समावेश है, इस गिरावट का मापन करने में कामयाब सिद्ध होगी, ऐसा मेरा दृढ विश्वास है। यदि अपेक्षित गिरावट नहीं दिखाई दी, तो आइंस्टाइन के गुरुत्वाकर्षण-सिद्धांत में परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं होगी, लेकिन यदि गिरावट सिद्ध हुई, तो यह अति महत्वपूर्ण सिद्धांत भी त्याज्य माना जाएगा।

सारांश

ये रहीं ब्रह्मांडिकी की कुछ झलकियां। ब्रह्मांड की उत्पत्ति का प्रश्न इतना गहन है कि उसे सुलझाना आज या कल का मामला नहीं, लेकिन वैज्ञानिक विधियों से हमें इस प्रश्न की गहराई को समझने में सहायता मिलती है और कुछ सीमित प्रश्नों के उत्तर मिलते हैं। खगोलीय तकनीकी की उन्नति के कारण, आशा है, अगले कुछ वर्षों में आज के कई प्रश्न हल हो जायेंगे।

3

क्या पृथ्वी के बाहर जीवों का अस्तित्व है ?

खगोलजैविकी

अब तक के दोनों व्याख्यानों में मैंने जिन वस्तुओं का विवरण प्रस्तुत किया, वे निर्जीव है। तारे, ग्रहनिकाय, वायुमेघ, गैलेक्सी, क्वेसार आदि वस्तुए, और संपूर्ण ब्रह्मांड भी निर्जीव माना जाता है तथा भौतिकी के अंतर्गत आता है। लेकिन आज के व्याख्यान का शीर्षक जीवों से संबंधित है और जिसके बारे में मानव में जिज्ञासा होनी स्वाभाविक है। जिस प्रकार पृथ्वी पर जीव हैं, क्या वैसे ही (या अन्य प्रकार के) जीव अन्यत्र भी हैं? यदि हैं, तो क्या वे हमसे भी अधिक विचक्षण, अधिक उन्नतावस्था में पहुंचे होंगे? क्या ऐसे विचक्षण जीवों से संपर्क स्थापित करना संभव है?

कुछ वर्ष पहले तक इन प्रश्नों की चर्चा वैज्ञानिक नहीं किया करते थे, क्योंकि उनकी दृष्टि में ये सब प्रश्न कल्पित माने जाते थे। एच०जी० वेल्स, ज्यूल्स वर्न जैसे लेखकों ने अपनी विज्ञान-कथाओं में ऐसे विषयों की चर्चा की थी। लेकिन वह चर्चा अधिकतर मनगढ़ंत रूप वाली थी, जिसे वास्तविक की अपेक्षा काल्पनिक समझकर ही पढ़ा जाता था। फिर भी कुछ द्रष्टा लेखकों की कल्पनाएं आगे चलकर वास्तविकता से काफी मिलती-जुलती सिद्ध हुईं।

परंतु पिछले दो दशकों में वैज्ञानिकों ने भी इस विषय में रुचि लेना प्रारम्भ किया है। इसके कारण निम्नलिखित है। प्रथम, खगोल विज्ञान की उन्नति होने के कारण नए प्रेक्षणों

..50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

द्वारा अन्तर-तारकीय अवकाश में कुछ कार्बनिक अणु पाए गए हैं, जिनका जैविकी के मूल अणु DNA से घनिष्ठ संबध है। जैविकी का विकास होने के कारण DNA की खोज हुई और इसकी भी कुछ जानकारी 1950-60 के दशक में मिली, कि जीवों की पहेली हल करने के लिए किन प्रश्नों के उत्तर आवश्यक हैं। अंतरिक्ष में यान छोड़ना मानवी तकनीकी के लिए संभव हो गया। अभिकलित्रों का विकास हुआ और बुद्धिमत्ता, संदेशों का आदान-प्रदान आदि विषयों पर काफी अनुसंधान हुआ।

इन सब घटनाओं के कारण खगोलजैविकी विज्ञान के एक अंग के रूप में उभरी। विशेषकर रूसी और अमेरिकन राष्ट्रीय विज्ञान-संस्थाओं के कुछ सदस्य 1971 में एक विज्ञान गोष्ठी में मिले, जहां उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर पाने के लिए वैज्ञानिक ढंग से शोध करने का प्रस्ताव पारित किया गया। इसके पहले ही फ्रैंक ड्रेक एवं कोकोनी तथा मॉरिसन ने रेडियो-तरंगों द्वारा ब्रह्मांड में स्थित किसी अन्य सभ्यता से आने वाले संदेशों को ग्रहण करने के प्रयास किए थे। आज हम इस विषय की कुछ चर्चा करेंगे।

DNA का स्वरूप

जीवित और निर्जीव पदार्थों में क्या फर्क है ? यदि प्राणियों में पाई जाने जाने वाली कोशिकाएँ जीवित मानी जाएं, तो वे जिससे वनी हैं, उन्हें क्या कहा जाए ? और ब्रह्मांड में अन्यत्र जीवों का स्वरूप पृथ्वी के जीवों-जैसा ही होगा या किसी और तरह का ? इन प्रश्नों के उत्तर निर्विवाद रूप में नही दिए जा सकते।

लेकिन यदि हम पृथ्वी पर के जीवों पर ही अपना ध्यान केंद्रित करें, तो एक महत्वपूर्ण खोज हमारी आंखों के सामने

आती है। वह यह कि प्राणि मात्र की कोशिकांतर्गत रासायनिक रचना के मूल में एक विशाल अणु पाया जाता है, जिसे डिऑक्सी रिबोन्यूक्लेइक अम्ल या संक्षेप में DNA कहते हैं। चित्र क्रमांक 12 में DNA की रचना दिखाई गई है।
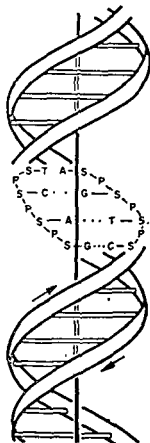
चित्र 12. DNA का अणु कुंडलिनी-युग्म के आकार का होता है।

50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

इसमें कुंडलिनी के आकार की दो अणु-शृंखलाएं हैं, जिनमें शर्करा और फॉस्फ़ेट के अणु पाए जाते हैं। जिस प्रकार सीढ़ी के दो समांतर दंडों को छोटे-छोटे दंड जोड़ते है, उसी प्रकार इन शृंखलाओं को सायटोसीन, ऐडेनीन, थायमीन, तथा ग्वानीन (संक्षेप में C,A,T, और G) के अणु एक निश्चित क्रम में जोड़ते हैं। ये क्षार नाइट्रोजनयुक्त होते हैं।

इस प्रकार कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, तथा नाइट्रोजन के परमाणु DNA में प्रमुखता से मिलते हैं। जिस प्रकार किसी जिगसॉ पहेली में तरह-तरह के टुकड़े किसी निश्चित क्रम से लगाकर चित्र पूरा किया जाता है, उसी प्रकार हम यह कह सकते हैं कि जीवों में कार्बनिक अणु किसी विशेष संयोजन में पाए जाते हैं। ऐसा क्यों होता है, यह रहस्य अभी तक नहीं खुल सका है।

अब हम कुछ ऐसे कार्बनिक अणुओं की सारणी नीचे प्रस्तुत करते हैं, जो अंतरिक्ष में पाए गए हैं। रेडियो तथा सूक्ष्म तरंगों की सहायता से इन अणुओं की खोज 1960-70 के दशक से होने लगी। इसमें संदेह नहीं कि जीवों के लिए आवश्यक अनेक अणु इस तालिका में हैं।

बाण चिह्न अधिक विलष्ट अनुरचना दिखाते हैं।

-50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003
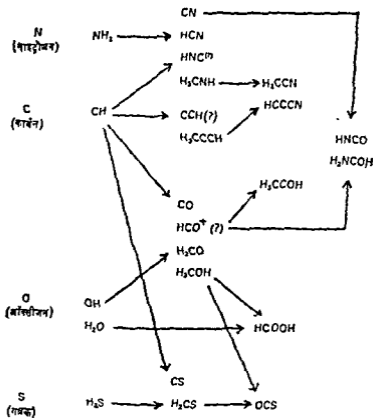
ड्रेक का समीकरण

पृथ्वी के बाहर कितनी उन्नत विचक्षण सभ्यताएं हैं, यह जानने के लिए हमें फ्रैंक ड्रेक के निम्नलिखित समीकरण को हल करना पड़ेगा। ड्रेक ने हमारी आकाशगंगा में विचक्षण सभ्यताओं की संख्या N इस प्रकार व्यक्त की है :

$$N = A \times B \times C \times D \times E \times F \times G$$

जहां

A=प्रति वर्ष हमारी आकाशगंगा में पैदा होने वाले तारों की संख्या

B=तारे का ग्रहनिकाय होने की प्रायिकता

C=ग्रह में जीवोद्भव पोषक परिस्थिति की प्रायिकता

D=अनुकूल परिस्थिति होने पर जीवोद्भव होने की प्रायिकता

E=जीवों का विकास विचक्षण जीवों तक होने की प्रायिकता

F=विचक्षण जीवों द्वारा अति उन्नत तकनीकी पैदा करने की प्रायिकता

G=अति उन्नत सभ्यता के टिकने का काल

ड्रेक का समीकरण काफी चर्चा का विषय रहा है। इसे हल करने के लिए खगोलिकी, जैविकी, भौतिकी की मदद लेने के अलावा 'विचक्षणता किसे कहते हैं?' 'अति उन्नत तकनीकी किस प्रकार विकसित होगी?' आदि मौलिक प्रश्नों पर भी अनुसंधान करना आवश्यक है। आइए, पहले इस समीकरण पर विचार करें।

उपर्युक्त गुणनखंडों की जानकारी आज हमें नहीं है। खगोलज्ञ कुछ आत्मविश्वास के साथ केवल पहले गुणनखंड के बारे में जानकारी दे सकते हैं। पहले व्याख्यान में मैंने तारों के

संबंध में जिन बातों का जिक्र किया था, उनका उपयोग हमें N का मान मालूम करने के लिए करना होगा। अन्य गुणनखंडों के बारे में हम केवल अंदाज़ ही लगा सकते हैं।

हमारी आकाशगंगा में लगभग सौ अरब तारे हैं। यदि हम कल्पना करें कि सूर्य जैसे तारे (या ऐसे तारे जो उससे बहुत भिन्न नहीं हैं) अनुकूल दूरी पर स्थित ग्रहों पर जीवों का पालन-पोषण कर सकते हैं, और यदि यह भी मान लें कि विचक्षण, अति उन्नत सभ्यता करोड़ों साल टिक सकती है, तो N का मान दस लाख के आसपास आता है।

हम लाख-दस लाख के दरम्यान की संख्या को माध्य मानकर इस प्रकार वर्गीकरण करेंगे। अन्यत्र सभ्यताएं हैं और उनसे संपर्क स्थापित करना सरल काम है—इस प्रकार की आशा रखने वाले व्यक्तियों के अनुसार N का मान इस माध्य संख्या से काफी अधिक है। इसके विपरीत, निराशावादियों का कहना है कि N का मान इस माध्य संख्या से बहुत ही कम है और यह भव कि संपूर्ण आकाशगंगा में केवल पृथ्वी पर ही विचक्षण जीव है।

आइए, इन दोनों दृष्टिकोणों पर थोड़ा विचार करें।

असंभवता, साम्राज्यवाद, और चिड़ियाघर

उपर्युक्त तीन शब्दों के द्वारा हम आशावादी तथा निराशावादी दोनों दृष्टिकोणों को व्यक्त कर सकते हैं।

निराशावादियों का कहना है कि जीवों के उद्भव के लिए इधर-उधर बिखरे रासायनिक अणुओं का DNA जैसे अति व्यवस्थित स्वरूप में अपने-आप इकट्ठा होना इतनी असंभव बात है कि इतनी विशाल आकाशगंगा में भी हमारे अतिरिक्त अन्यत्र

सभ्यताओं का अस्तित्व होना असंभव है। इसके प्रतिकूल, आशावादियों का कहना है कि अभी हम यह नहीं जान पाए हैं कि पृथ्वी पर जीवोद्‌भव किस प्रकार हुआ। चूंकि पृथ्वी पर जीव हैं और विकसित अवस्था में हैं, इसलिए ऐसा निष्कर्ष निकालना अनुचित है कि अन्यत्र जीवोद्‌भव असंभव है।

आशावादियों का दावा है कि यदि कोई जीव अतिविचक्षण अवस्था में पहुंचे, तो अपनी तकनीकी के आधार पर वह आस-पास के तारों के ग्रहनिकायों पर जा बसेगा। वहां से वह फिर और दूर के ग्रहों पर अधिकार जमाएगा। इस प्रकार साम्राज्य-वादी प्रवृत्ति से प्रेरित होकर वह संपूर्ण आकाश गंगा में अपने झंडे फहराएगा। यद्यपि आकाशगंगा बहुत विशाल है, फिर भी इस साम्राज्यवाद के लिए पर्याप्त समय उपलब्ध है। जैसा हमने पिछले व्याख्यान में देखा, आकाशगंगा का व्यास लगभग एक लाख प्रकाशवर्ष है। यदि प्रकाश के वेग के दसवें हिस्से से भी कोई यात्रा करे, तो एक कोने से दूसरे कोने तक यात्रा का समय दस लाख वर्ष होता है। हमने यह भी देखा कि आकाशगंगा की आयु दस से पन्द्रह अरब वर्ष की है। इतनी आयु में आकाशगंगा के हजारों चक्कर लग सकते हैं और इस प्रकार विचक्षण सभ्यता अपने साम्राज्य को आकाश गंगा भर में फैला सकती है।

इस मत से सभी आशावादी सहमत नहीं हैं। अनेकों का कहना है कि साम्राज्यवाद का उद्‌गम पृथ्वी पर जिन कारणों से हुआ, वे कारण इस विचक्षण सभ्यता पर लागू नहीं होते। जब अपने देश में जीवन सुखी नहीं होता, तब अन्यत्र अधिक सुखकर स्थान की ओर जाने की प्रवृत्ति जीव में होती है। लेकिन अति-विचक्षण सभ्यताएं अपने निवास-स्थान को इतना सुखकर बना लेंगी कि अन्यत्र जाने की प्रवृत्ति उनमें नहीं होगी। इसी प्रकार, ऐसी सभ्यता अपनी जनसंख्या पर नियंत्रण रखेगी, जिसके

कारण बढ़ती आबादी के लिए अन्य स्थान खोजने की उसे जरूरत नहीं पड़ेगी।

साम्राज्यवाद के सिद्धांत के विरोध में निराशावादियों का दावा है कि यदि संपूर्ण आकाशगंगा में विचक्षण सभ्यताएं फैली हुई हैं, तो फिर उन्होने हमसे संपर्क क्यों नही स्थापित किया? चूंकि पृथ्वी पर बाहरी आक्रमण से मुक्त मानवी सभ्यता कब से अड्डा जमाए हुए है, इसीलिए यह कहना गलत है कि हम चारों ओर से विचक्षण सभ्यताओं से घिरे हैं।

इस मत के विरोध में आशावादी चिड़ियाघर का सिद्धांत पेश करते है। चिड़ियाघर में अनेक पक्षी तथा जानवर रहते हैं। जंगल के प्राणी शिकार में मारे जाते हैं, लेकिन वही प्राणी चिड़ियाघर में बिना संकट और बिना हस्तक्षेप के निवास करते हैं। उसी प्रकार, *मानव सहित सभी प्राणियों से युक्त* यह पृथ्वी एक विशाल चिड़ियाघर या अभयारण्य है। जानबूझकर अति-विचक्षण सभ्यताओं ने हमें प्रेक्षणार्थ पृथ्वी पर बिना हस्तक्षेप के निवास करने दिया है। शायद वे देखना चाहते है कि हम पृथ्वी पर के जीव आखिर किस दशा को प्राप्त होते हैं।

अब इस मतभेद को छोड़कर इस बात की चर्चा करें कि विचक्षणता है क्या?

विचक्षणता के स्वरूप

वास्तव में यह हिसाब लगाना मुश्किल है कि किसी सभ्यता में कितनी विचक्षणता है। जिस प्रकार बुद्धिमत्ता का मूल्यांकन करने के लिए हम परीक्षाएं लेते है, उसी प्रकार किसी सभ्यता में कितनी विचक्षणता है, उसने कितनी उन्नति की है, इसका मूल्यांकन करने के लिए विज्ञों ने दो निकष अपनाए हैं। पहला निकष है तकनीकी का तथा दूसरा जानकारी का।

50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

जैसे-जैसे मानव उन्नति के पथ पर आगे बढता गया, वैसे-वैसे उसने ऊर्जा का अधिकाधिक उपयोग करना शुरू किया। बढ़ते यांत्रिकीकरण के साथ ऊर्जा भी अधिक खर्च होने लगी। आज भी यदि हम विभिन्न देशों को तुलना करें, तो अमेरिका-जैसे उन्नत देश में प्रति व्यक्ति साल भर में बिजली के 50,000 यूनिटों से अधिक ऊर्जा खर्च होती है जबकि भारत में प्रति व्यक्ति इसके दशांश से भी कम ऊर्जा खर्च होती है।

सूर्य से प्रति सेकिंड चालीस करोड़ अरब-अरब वॉट शक्ति प्रकाश के रूप में निकलती है। इसका लगभग दो अरबवां भाग पृथ्वी के हिस्से में आता है। परन्तु मानव द्वारा संपूर्ण पृथ्वी पर खर्च की जाने वाली शक्ति इसके मुकाबले में इतनी कम है कि सूर्य-प्रकाश को शक्ति के उपर्युक्त हिस्से के दस हज़ारवें भाग से उसका काम अच्छी तरह चल सकेगा।

यदि मानव सूर्य से पृथ्वी को प्राप्त होने वाली शक्ति का काफी हिस्सा इस्तेमाल करने लगे, तब उसे हम उन्नति की, विचक्षणता की, पहली सीढ़ी पर पहुंचा हुआ मानेंगे। यदि कोई विचक्षण सभ्यता सूर्य या किसी तारे को प्रकाश-शक्ति के बराबर शक्ति का इस्तेमाल करे, तो उसे दूसरी सीढ़ी तक पहुंचा-जैसा प्रमाणपत्र दिया जा सकता है। तीसरी सीढ़ी इससे भी ऊंची है। संपूर्ण आकाशगंगा की शक्ति के बराबर शक्ति का उपयोग करनेवाली सभ्यता इस सीढ़ी पर आ पहुंचेगी। आकाश-गंगा से आनेवाली शक्ति सूर्य की शक्ति की दस अरब गुणा है।

पहली सीढ़ी पर पहुंची सभ्यता अपना ग्रह निकाय छोड़कर आसपास के तारों और उनके ग्रह निकायों के पास चक्कर मार सकती है। दूसरी सीढ़ी पर की सभ्यता आकाश गंगा के एक कोने से दूसरे कोने तक यात्रा कर सकती है। तीसरी सीढ़ी वाली सभ्यता हमारी आकाश गंगा को छोड़कर दूसरी गैलेक्सी के पास

तक जा सकती है।

विचक्षणता जानकारी पर भी निर्भर है। जानकारी को व्यक्त करने की एक विधि इस प्रकार है। अंग्रेजी भाषा का उदाहरण लीजिए। इसमें 26 अक्षर हैं। अक्षरों के अलावा पूर्ण विराम, कॉमा, प्रश्नचिह्न आदि को जोड़कर हम यह संख्या 32 तक ले जा सकते है। अभिकलित्रों की भाषा में 0 और 1 का उपयोग करके पांच अंकों की कुल 32 संख्याएं बन सकती हैं। इस प्रकार हम A, B, C इत्यादि को पांच अंकों द्वारा व्यक्त कर सकते हैं।

A=00000, B=00001,···

अभिकलित्र की भाषा में प्रत्येक अक्षर में समाहित जानकारी इस प्रकार 5 अंकों की है। यदि मान लिया जाए कि औसत शब्द चार अक्षरों का होता है, तो प्रत्येक शब्द में 20 अंकों की जानकारी है। यदि यह मानें कि औसत पुस्तक में 50,000 शब्द हैं, तो पुस्तक में निहित जानकारी दस लाख अंकों की है। यदि यह मान लें कि संसार में सभी भाषाओं में कुल मिलाकर करोड़ पुस्तकें हैं, तो उन सबकी जानकारी 10^{13} अंकों की होगी। साहित्य के अतिरिक्त जानकारी संगीत, चित्रकला, वास्तुकला इत्यादि में भी होती है। चूंकि इनका वर्णन भाषा द्वारा किया जा सकता है, इसलिए हम कह सकते हैं कि इन सबको मिलाकर हमारी आधुनिक सभ्यता की जानकारी 10^{13}-10^{14} के दरम्यान है। दो हजार साल पहले यह जानकारी इसका दस सहस्रांश थी। आगे चलकर यह जानकारी सौ गुणा, हजार गुणा बढ़ती जाएगी।

लेकिन हम यह भी कल्पना कर सकते हैं कि यदि अति-विचक्षण जीवों की जानकारी 10^{25}-10^{26} के दरम्यान होगी, तो उनकी विचार-पद्धति हमसे इतनी उच्च स्तरीय होगी कि हमें उनसे वार्तालाप करना उतना ही मुश्किल होगा, जितना हमें

अपने से निम्नस्तरीय जीव, कुत्ते या बिल्ली आदि से होता है।

फिर भी हमें यह देखना चाहिए कि इन जीवों से हम किस प्रकार संपर्क स्थापित कर सकते हैं।

अंतरिक्ष यानों का उपयोग

जिस प्रकार कोलंबस, मैगेलन, वास्को-डि-गामा आदि यात्रियों ने स्वयं यात्रा करके दूर-दूर की मानवी सभ्यताओं से संपर्क स्थापित किया, उसी प्रकार क्या मानव दूसरे ग्रहों, तारों की ओर यात्रा करके नई सभ्यताओं की खोज कर सकता है? 1957 में स्पुतनिक के साथ-साथ अंतरिक्ष-युग का शुभारंभ हुआ और सर्वसाधारण व्यक्ति ऐसा सोचने लगा है कि अंतरिक्षयानों में यात्रा करके नई सभ्यताएं ढूंढ़ निकालना असम्भव नहीं है।

लेकिन थोड़ा हिसाब लगाकर इसका अंदाज लगावें कि यह मार्ग कितना कठिन है। मानव ने अंतरिक्ष यान में यात्रा करके चन्द्रमा पर पैर रखे (देखिए फोटो क्रमांक 8)। इस यात्रा में उसे आने-जाने में लगभग एक सप्ताह की अवधि लगी। चन्द्रमा की पृथ्वी से दूरी केवल 1.28 प्रकाश सेकंड है। इसके मुकाबले सूर्य से सबसे निकट का तारा प्रॉक्सिमा सॅटावरी सवा चार प्रकाश वर्ष दूर है। आजकल की तकनीकी से वहां तक यात्रा करने के लिए लाखों साल लगेंगे।

ब्रिटिश इंटरप्लैनेटरी सोसाइटी के कुछ सदस्यों ने अंतरिक्ष यान का एक प्रतिरूप बनाया, जिसका चित्र, चित्र क्रमांक 13 में दिया गया है। इस मॉडल का उद्देश्य बर्नार्ड के तारे की यात्रा करना है। बर्नार्ड का तारा लगभग 6 प्रकाश वर्ष दूरी पर है। इसके अपने ग्रह होने की संभावना है, इसीलिए यह तारा चुना गया। अंतरिक्ष यान यदि प्रकाश की 12% चाल से जाए, तो पूर्ण यात्रा के लिए उसे 100 वर्ष लगेंगे। यद्यपि जो व्यक्ति इस

यात्रा पर जाएंगे, वे खुद तो जीवित नही रहेंगे, पर उनके लड़के या पोते (जो यात्रा में ही पैदा होंगे) जीवित वापस आ सकेंगे।

इतनी तेज चाल से यान को चलाने के लिए जो राकेट उपयोग में आएगे, वे नाभिकीय शक्ति पर चलेंगे। यान तथा यात्रियों और उनकी साधन सामग्री (50 साल तक पर्याप्त) के लिए 4,000 टन वजन तथा नाभिकीय ईंधन के लिए 50,000 टन वजन लगेगा। आज सभी देशों के पास सहारक अस्त्रों के रूप में जो नाभिकीय ईंधन है, वह सब इस यान में खर्च हो जाएगा।

यद्यपि अगले 50 वर्षों में मानवी तकनीकी ऐसा यान, जो 'डिडेलस प्रकल्प' के नाम से प्रसिद्ध है, बना सकेगी, फिर भी इस प्रकल्प के साकार होने की सम्भावना नही है। लेकिन मानवी यात्रा द्वारा अन्यत्र जीवों की खोज करना कितना कठिन काम है, यह इस प्रकल्प से स्पष्ट हो जाता है।

मानव नही, तो क्या यांत्रिक उपकरण भेजकर हम विचक्षण जीवों का पता लगा सकते है ? वाइकिंग, वॉयेजर जैसे अंतरिक्ष यानों ने सौर-मंडल के ग्रहों के पास जाकर फोटो लिए और उन्हें भेजकर तथा अन्य विधियों से भी बहुत महत्त्वपूर्ण जानकारी प्रदान की। यह सब काम दूर-नियंत्रित यंत्रों द्वारा किया गया। यंत्र भेजना मानव भेजने से अधिक सुगम है, फिर भी ऊर्जा तथा समय की कठिनाइयां (जिनसे डिडेलस के संदर्भ में हम परिचित हुए) इतनी है कि अभी यह प्रकल्प भी साध्य होने की संभावना नही है। हां, हमारे सौर-मंडल के अन्य ग्रहों पर जीव है या नहीं, इसका पता इस विधि से लगाया जा सकता है। इस बारे में मंगल ग्रह से काफी आशा थी, लेकिन वाइकिंग यानों को वहां जीवों का कोई आभास नही मिला।

हां, 1972 में पायोनीयर-10 यान पर एक पटरी रखी गई, जिस पर पृथ्वी एवं उस पर स्थित मानवों के बारे में सांकेतिक

भाषा में जानकारी लिखी। यह पटरी चित्र क्रमांक 14 में देखिए। सांकेतिक भाषा गणित की युग्म पद्धति की है, याने 0 और 1 के
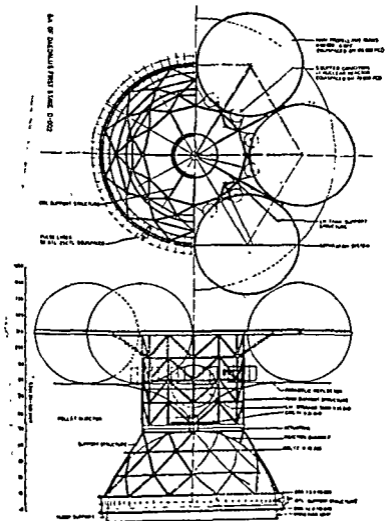
चित्र 13. डिडेलस प्रकल्प का प्रतिरूप

द्वारा लिखे गए गणित की; साथ ही साथ 21 सेंटीमीटर तरंग दैर्घ्य (जिसकी चर्चा हम आगे करेंगे) का भी प्रयोग किया गया है और सूर्य व पृथ्वी का अंतरिक्ष में स्थान दिखाने के लिए अति नियमित रूप से स्पंदन करने वाले स्पंदक तारों (पल्सारों) का भी उपयोग किया गया है।

इस पटरी का उद्देश्य यह है कि यदि कोई अतिविचक्षण जीव इसे देखे, तो स्पंदक (पल्सार) की जानकारी से वह पृथ्वी और सूर्य का पता लगा सकेगा। पृथ्वी के मानव कैसे हैं और वे औसतन कितने ऊंचे हैं, यह 21 सें० मी० तरंग दैर्घ्य का उपयोग करके उसे मालूम हो सकेगा। यदि इस जानकारी से उसकी उत्सुकता बढे, तो शायद वह हमारी खोज करने के लिए इधर
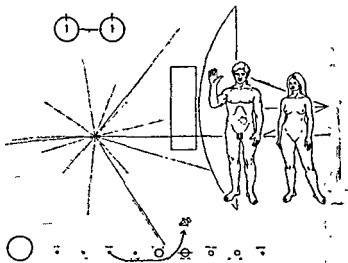
चित्र 14. पायोनियर-10 पर रखी पटरी का चित्र, जिसमें सांकेतिक भाषा मे पृथ्वी तथा मानव के बारे मे जानकारी दी गई है।

आ जाएगा। जो बात हमारे लिए असंभव है, वह उस अति उन्नत, विचक्षण जीव के लिए सहज साध्य होगी। इस प्रकार घर बैठे हमारा संपर्क उससे हो जाएगा।

कुछ लोगों ने इस प्रकल्प का विरोध किया है। यदि हमारा पता ऐसे विचक्षण जीवों को लग जाए, तो ऐसा होने की आशंका है कि वे इधर आकर पृथ्वी को पदाक्रांत करके हमें अपना गुलाम बना लेंगे। कुछ लोगों ने इस प्रकल्प को हंसी विनोद का साधन भी बनाया है।

रेडियो संदेशों का आदान-प्रदान

अंतरिक्ष यान भेजना खर्च की बात है और वह समय भी बहुत लेता है। इससे सुगम तरीका है संदेशों का आदान-प्रदान—जो संदेश प्रकाश के वेग से भेजे जा सकते हैं।

विद्युत चुंबकीय तरंगें प्रकाश के वेग से जाती हैं। लम्बे तरंग दैर्घ्य वाली रेडियो-तरंगों से लेकर अत्यल्प तरंग दैर्घ्य वाली गामा किरणों तक इन तरंगों का अध्ययन तथा प्रेक्षण मानव ने किया है। खगोलज्ञों ने अंतरिक्ष से आने वाली इन तरंगों को ग्रहण करने के लिए तरह-तरह की दूरबीनें बनाई हैं, लेकिन सभी तरंगें संदेशों के आदान-प्रदान के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

तरंग ऐसी होनी चाहिए, जिसे भेजने के लिए ऊर्जा कम खर्च हो, जिसकी जानकारी हमारी आकाशगंगा के सभी भागों में रहनेवाले जीवों को हो, और जिसका पृथ्वी के वायुमंडल में अवशोषण न हो।

21 सेंटीमीटर तरंग दैर्घ्य की रेडियो तरंगें इस ठीक समझी जाती है। जब हाइड्रोजन के परमाणु में ५ इलेक्ट्रॉन अपने अक्ष को एकाएक बदल तरंग दैर्घ्य की तरंग निकलती है। ये ₹र

भागों से आती हैं। इसलिए ऐसा तर्क करना उचित होगा कि संदेशों के आदान-प्रदान के लिए अन्य जीव भी यही तरंग इस्तेमाल करेंगे। (देखिए चित्र क्रमांक 15)

आदान-प्रदान से आशय है कि हम रेडियो संदेश भेजने का काम करें तथा उन्हें ग्रहण करने का भी। इसमें दूसरा काम पहले से अधिक सरल है। यदि हम एक विशाल दूरबीन अंतरिक्ष की ओर किसी विशेष दिशा में मोड़कर रखें, तो शायद वहां से भेजे जाने वाले संदेश हमें मिल जाएं। बन्द कमरे में दो आदमी बातें कर रहे हों और हम दरवाजे की चाभी के छेद के पास कान लगाकर सुनें, तो जैसा वहां लगेगा, वैसा ही कुछ यहां अभिप्रेत है कि दो विचक्षण सभ्यताएं सैकड़ों प्रकाश वर्षों के अन्तर पर एक-दूसरे से बातचीत कर रही हों और हम बीच में बैठे सुनने का काम कर रहे हैं।

1960 से ड्रेक प्रथम छोटी दूरबीन से और फिर विशाल दूरबीन (देखिए फोटो क्रमांक 9) से इस प्रकार के संदेश ग्रहण
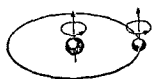
समातर प्रचक्रण
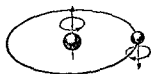
प्रतिसमातर प्रचक्रण

चित्र 15. हाइड्रोजन परमाणु मे घूमने वाला इलेक्ट्रान अपना अक्ष किस प्रकार बदलता है, यह इस चित्र मे दिखाया गया है। इस परिवर्तन से इलेक्ट्रान की ऊर्जा घट जाती है जिसके फलस्वरूप 21 सेंटीमीटर तरंग दैर्घ्य का विकिरण बाहर आता है।

करने के प्रयत्न कर रहे हैं, लेकिन उन्हें कामयावी हासिल नहीं हुई है। ह्यूलेट पैकार्ड कंपनी के बर्नर्ड ऑलिवर ने कई साल पहले 'सायक्लॉप्स प्रकल्प' नाम से एक नए टेलिस्कोप का प्रस्ताव रखा है। फोटो क्रमांक 10 में इस प्रकल्प का चित्र देखिए। लगभग हजार दूरबीनें, प्रत्येक 100 मीटर व्यास की, समान्तर दिशा में देखें ऐसी इस प्रकल्प में व्यवस्था की गई है। यदि आसपास के तारों में अति उन्नत, विचक्षण जीव हैं, तो उनके संदेश सायक्लॉप्स अवश्य ग्रहण कर सकेगा।

लेकिन यहां भी पैसे की कठिनाई है। इसीलिए यह प्रकल्प अभी केवल कागज पर है। सायक्लॉप्स बनने पर उसका उपयोग संदेश भेजने के लिए भी किया जा सकता है।

संदेशों का स्वरूप सांकेतिक होगा। मोर्स कोड की तरह 0 और 1 के गणित का प्रयोग करके हमारी गणित और विज्ञान की जानकारी इन संदेशों के द्वारा बाहर भेजनी होगी। उसे ग्रहण करने वाला इस बात का अंदाज लगा सकेगा कि हमारी सभ्यता कितनी उन्नत या कितनी पिछड़ी है।

वैज्ञानिकों का विश्वास है कि इसी विधि से हम शीघ्र इसका निर्णय कर सकेंगे कि पृथ्वी के बाहर जीवों का अस्तित्व है या नहीं।

सिंहावलोकन

मेरे तीनों व्याख्यानों में से केवल पहले के शीर्षक में प्रश्न चिह्न नहीं था। इसका मतलब यही है कि जहां तक विज्ञान के आधार पर खगोलिकी ने ब्रह्मांड की पहेलियां सुलझाने का प्रयत्न किया है, वहां उसे तारों की जानकारी हासिल करने में पर्याप्त सफलता मिली है। ब्रह्मांडिकी की पहेली अभी नहीं सुलझी है। शायद यह प्रश्न इतना गहन है कि हम इसका उत्तर कभी न पा सकेंगे। फिर भी इस दिशा में जो प्रयत्न हो रहे हैं, उनकी कुछ झलक मात्र दिखाने का काम मैंने किया है।

इस अथाह ब्रह्मांड मे मानव का क्या स्थान है? खगोलिकी ऐसा विषय है, जो दो परस्पर विरोधी भावनाओं का द्वन्द्व हमारे मन में चालू करता है। एक भावना ऐसी है कि इतने बड़े ब्रह्मांड में मानव कितना तुच्छ है। जिस पृथ्वी पर राज्य करने का उसे अभिमान है, उस पृथ्वी का ब्रह्मांड में कितना छोटा स्थान है, यह जानकर उसका दर्प हवा में विलीन हो जाता है—लेकिन यहां एक विरोधी भावना भी मन में आती है। इतना छोटा होने पर भी मानव ने ब्रह्मांड की पहेली सुलझाने का प्रत्याह्वान स्वीकार किया, यह भी कुछ कम नहीं है। और, अल्प ही क्यों न हो, विज्ञान के सहारे उसने जो कुछ जानकारी हासिल की है, वह उसकी विचक्षणता की द्योतक है। ब्रह्मांड में अन्यत्र विचक्षण जीव हों या न हों, मानव अपने को विचक्षणता की सीढ़ी पर ऊपर चढ़ता समझे, तो अनुचित नहीं है।

ग्रन्थागार [illegible]
गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली

इन व्याख्यानों में मैंने यथाशक्ति हिन्दी शब्दों का प्रयोग किया है तथा वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्द केंद्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित बृहत् पारिभाषिक शब्द-संग्रह, विज्ञान, खंड 1 एवं 2 से लिए हैं। इन व्याख्यानों में प्रयुक्त वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दों के संग्रह यहां प्रस्तुत हैं—पहले हिन्दी-अंग्रेजी में और फिर अंग्रेजी-हिन्दी में।

हिन्दी-अंग्रेजी

अंतरंग	interior
अंतरिक्ष	space
अक्षरता	conservation
अणु	molecule
अधिनवतारा	supernova
अनुपात	ratio proportion
अनुसंधान	research
अभिकलित्र	computer
अभिक्रिया	reaction
अभिरक्त विस्थापन	redshift
अवरक्त	infrared
अवशिष्ट	remnant
अवशेष	relic

अवशोषण रेखाएं	absorption lines
अवकाश	space/sky
आकाश-काल	space-time
आकाशगंगा	Milky Way, Galaxy
आयतन	volume
आरेख	diagram
आलेख	graph
उदग्र अक्ष	vertical axis
ऊर्जा	energy
एकध्रुव	monopole
एक्स-किरणें	X-ray
कार्बनिक	organic
कुंडलिनी	helix
कृष्णविवर	black hole
कृष्णिका	black body
कोशिका	cell
क्रोड	core
क्वांटम सिद्धान्त	quantumtheory
क्षैतिज अक्ष	horizontal axis
खंडन	fragmentation
खगोलजैविकी	astro-biology
खगोलज्ञ	astronomer
खगोलिकी	astronomy
गुच्छ	cluster
गुरुत्वाकर्षण	gravitation
गैस	gas
घनत्व	density

चुम्बकीय क्षेत्र	magnetic field
जैविकी	biology
ज्यामिति	geometry
ज्योति	luminosity
तरंग	wave
तरंग दैर्घ्य	wavelength
ताप	temperature
तारागुच्छ	cluster of stars
त्रिकोणमिति	trignometry
त्रिज्या	radius
दानवतारा	giant star
दाब	pressure
दूरबीन	telescope
द्युति	brightness
द्रव्यमान	mass
द्विविम	two dimensional
नाभिक	nucleus
नाभिकीय अभिक्रिया	nuclear reaction
नाभिकीय बल	nuclear force
नाभिकीय भौतिकी	nuclear physics
निर्दिष्ट करना	denote
नीहारिका	nebula
परम	absolute
परमाणु	atom
परिकल्पित	speculative
परिमित	finite
पारस्परिक क्रिया	interaction

पृथक्करण	separation
प्रकाशवर्ष	light year
प्रतिकर्षण	repulsion
प्रतिरूप	model
प्रतिलोम	inverse
प्रसारी ब्रह्मांड	expanding universe
प्रागुक्ति	prediction
प्रायिकता	probability
प्रेक्षक	observer
प्रेक्षण	observation
बल	force
ब्रह्मांड	universe
ब्रह्मांडिकी	cosmology
ब्रह्मांडिकीय सिद्धांत	cosmological principle
भौतिक विज्ञानी	physicist
भौतिकी	physics
महाविस्फोट	big bang
मात्रक	unit
मात्रा	quantity
मुख्य अनुक्रम	main sequence
मूलतत्व	element
युग्मतारा	binary star
युग्म पद्धति	binary system
रेडियो ऐक्टिव	radioactive
लॉगेरिथ्मीय मापक्रम	logarithmic scale
वक्रता	curvature
वर्ग	square

विकिरण	radiation
विचक्षण	intelligent
विज्ञान	science
विमा	dimension
विशिष्ट सापेक्षता	special relativity
विश्लेषण	analysis
विस्तृति	expanse
व्यापका सपेक्षता	general relativity
व्यास	diameter
शक्ति	power
श्वेत वामन	white dwarf
संकुचन	contraction
संतुलन	equilibrium
संलयन	fusion
संहृति	mass
सतत सृजन	continuous creation
समदैशिकता	isotropy
समांतर	parallel
समीकरण	equation
सारणी	table
सूक्ष्मतरंग	microwave
सौर-संहृति	solar mass
स्थायी अवस्था	steady state
स्थिरांक	constant
स्थैतिक	static
स्पंदक	pulsar
स्पष्टीकरण	explanation
स्पेक्ट्रम	spectrum
स्रोत	source

अंग्रेजी-हिंदी

absolute	परम
absorption lines	अवशोषण रेखाएं
analysis	विश्लेषण
astrobiology	खगोल-जैविकी
astronomer	खगोलज्ञ
astronomy	खगोल-विज्ञान/खगोलिकी
atom	परमाणु
big bang	महाविस्फोट
binary star	युग्मतारा
binary system	युग्म-पद्धति
biology	जैविकी
black body	कृष्णिका
black hole	कृष्ण विवर
brightness	द्युति
cell	काशिका
cluster	गुच्छ
cluster of stars	तारा-गुच्छ
computer	अभिकलित्र
conservation	अक्षरता
constant	स्थिरांक
continuous creation	सतत सृजन
contraction	संकुचन
core	क्रोड
cosmological principle	ब्रह्माडिकीय सिद्धांत
cosmology	ब्रह्मांडिकी
curvature	वक्रता

denote	निर्दिष्ट करना
density	घनत्व
diagram	आरेख
diameter	व्यास
dimension	विमा
element	मूलतत्व
energy	ऊर्जा
equation	समीकरण
equilibrium	संतुलन
expanding universe	प्रसारी ब्रह्मांड
expanse	विस्तृति
explanation	स्पष्टीकरण
finite	परिमित
force	बल
fragmentation	खंडन
fusion	संलयन
galaxy	गैलेक्सी
Galaxy	आकाशगंगा
gas	गैस
general relativity	व्यापक सापेक्षता
geometry	ज्यामिति
giant star	दानव तारा
graph	आलेख
gravitation	गुरुत्वाकर्षण
helix	कुंडलिनी
horizontal axis	क्षैतिज अक्ष
infrared	अवरक्त
intelligent	विचक्षण

interaction	पारस्परिक क्रिया
interior	अंतरंग
inverse	प्रतिलोम
isotropy	समदैशिकता
light year	प्रकाश-वर्ष
logarithmic scale	लॉगेरिथ्मीय मापक्रम
luminosity	ज्योति
maqnetic field	चुंबकीय क्षेत्र
main sequenc	मुख्य अनुक्रम
mass	संहति/द्रव्यमान
microwave	सूक्ष्म तरंग
Milky Way	आकाशगंगा
model	प्रतिरूप
molecule	अणु
monopole	एकध्रुव
nebula	नीहारिका
nuclear force	नाभिकीय बल
nuclear physics	नाभिकीय भौतिकी
nuclear reaction	नाभिकीय अभिक्रिया
nucleus	नाभिक
observation	प्रेक्षण
observer	प्रेक्षक
organic	कार्बनिक
parallel	समांतर
physicist	भौतिकी-विज्ञानी
physics	भौतिकी
power	शक्ति

प्रस्थान (कविता संग्रह :

, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

prediction	प्रागुक्ति
pressure	दाब
probability	प्रायिकता
proportion	अनुपात
pulsar	स्पंदक
quantity	मात्रा
quantum theory	क्वांटम सिद्धांत
radiation	विकिरण
radioactive	रेडियो ऐक्टिव
radius	त्रिज्या
ratio	अनुपात
reaction	अभिक्रिया
redshift	अभिरक्त विस्थापन
relic	अवशेष
remnant	अवशिष्ट
repulsion	प्रतिकर्षण
research	अनुसंधान
science	विज्ञान
separation	पृथक्करण
sky	आकाश
solar mass	सौर-संहति
source	स्रोत
space	अंतरिक्ष, अवकाश
space-time	आकाश-काल
special relativity	विशिष्ट सापेक्षता
speculative	परिकल्पित
spectrum	स्पेक्ट्रम

square	वर्ग
static	स्थैतिक
steady state	स्थायी अवस्था
supernova	अधिनव तारा
table	सारणी
telescope	दूरबीन
temperature	ताप
trignometry	त्रिकोणमिति
two dimensional	द्विविम
unit	मात्रक
universe	ब्रह्मांड
vertical axis	उदग्र अक्ष
volume	आयतन
wave	तरंग
wavelength	तरंग दैर्घ्य
white dwarf	श्वेत वामन
X-rays	एक्स-किरण

घरधान (मग्रह .
, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

1938 में कोल्हापुर में जन्मे प्रो० जयंत विष्णु नार्लीकर की शिक्षा-दीक्षा हिन्दू विश्व-विद्यालय, वाराणसी, तथा कैम्ब्रिज वि.व-विद्यालय में हुई। ससम्मान डाक्टरेट करने के बाद वे कैम्ब्रिज में ही अध्यापन करने लगे। पंद्रह वर्ष विदेश में रहने के बाद वे भारत लौट आये और अब वैज्ञानिक शोध के क्षेत्र में देश की सबसे बड़ी संस्था, टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ फंडामेन्टल रिसर्च, बम्बई, में सीनियर प्रोफेसर हैं।

खगोलिकी के क्षेत्र में प्रो० नार्लीकर ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैज्ञानिक फ्रेड हॉयल के साथ महत्वपूर्ण कार्य किया है। अपने कार्यों के लिए उन्हें अनेक पदक तथा सम्मान प्राप्त हुए हैं जिनमें कुछ प्रमुख ये हैं: स्मिथ्स पुरस्कार (1962), एडम्स पुरस्कार (1967), पद्मभूषण (1965), नेहरू फैलो-शिप (1973-75), इन्स्टीट्यूट ऑफ साइंस का स्वर्ण पदक (1973), शांतिस्वरूप भटनागर पुरस्कार (1979), तथा राष्ट्र-भूषण पुरस्कार (1982)।